अभिनव कृषि

वर्ष-3 अंक-3 सितम्बर-2021

विशेषांक

● रबी फसल उत्पादन तकनीक ● रबी फसलों में समन्वीत कीट व रोग प्रबन्धन ● खरपतवार प्रबन्धन ● उन्नत कृषि उपकरण

प्रसार शिक्षा निदेशालय

कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)-324001

#IFFCONanoUrea

IFFCO
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व
Wholly owned by Cooperatives

इफको नैनो यूरिया तरल

पेश है किसानों के लिए दुनिया का पहला नैनो यूरिया!

लागत कम करने में सहायक

किसानों की आय में सुनिश्चित वृद्धि

मिट्टी की गुणवत्ता को बढ़ाए

फसल उपज को बढ़ाए

पौधों के पोषण में सहयोगी

पारंपरिक यूरिया से सस्ता

FOLLOW US:

IFFCO
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व

INDIAN FARMERS FERTILISER COOPERATIVE LIMITED
IFFCO Sadan, C-1 District Centre, Saket Place, New Delhi - 110017, INDIA
Phones : 91-11-26510001, 91-11-42592626. Website : www.iffco.coop

इण्डियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड
जयपुर तृतीय तल, नेहरू सहकार भवन, जयपुर, राजस्थान, राजस्थान 302001
दूरभाष : 0141-2740660, 2740307, 2740307

ललित पाटीदार
(M.Sc. Horticulture)

मो. 9413023482, 9887437524

अम्बिका मॉर्डन एग्रीकल्चर

KRISHAK
SUMITOMO CHEMICAL
Ranadey
DUPONT
BAYER
BASF
We create chemistry

नर्सरी टूल्स, मल्च, स्प्रे पम्प, खाद, बीज, कीटनाशक, वर्मी कम्पोस्ट, ऑर्गेनिक खाद एवं दवाई के लिए सम्पर्क करें।

चन्द्रभागा रोड़, झालरापाटन, जिला-झालावाड़ (राज.) 326023

कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
नवम् स्थापना दिवस

कृषि प्रौद्योगिकी प्रबन्धन एवं गुणवत्ता सुधार केन्द्र

(Agriculture Technology Management and Quality Improvement Centre -ATMQIC)

प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

स्थापना के उद्देश्य

- नवोन्मेषी कृषि प्रौद्योगिकी का प्रभावी हस्तानान्तरण
- किसान कॉल सेन्टर की स्थापना
- कृषि तकनीकी संग्रहालय की स्थापना
- कृषि संसाधन केन्द्रों की स्थापना
- कृषि आदान व उत्पाद बिक्री केन्द्र की स्थापना
- कृषक उपयोगी साहित्य प्रकाशन
- विश्वविद्यालय द्वारा विकसित विभिन्न तकनीकियों का संकलन एवं प्रदर्शन

स्वामी प्रकाशक : डॉ. एस.के. जैन, निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Website : https://aukota.org
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com
दूरभाष : **0744- 2326727**

पुस्त प्रेष्य _____

स्वामी डॉ. एस.के. जैन, प्रकाशक निदेशक प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, बोरखेड़ा, कोटा एवं मुद्रक श्री जमील अहमद मैसर्स डायमण्ड प्रिन्टर्स, शॉप नं. 2, काली मस्जिद के पास, नई धानमण्डी, कोटा (राज.) से मुद्रित एवं प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, बोरखेड़ा बारां रोड़, कोटा-324001 (राज.) से प्रकाशित, संपादक डॉ.एस.के. जैन

अभिनव कृषि

वर्ष–3 अंक–3 सितम्बर–2021 पृष्ठ संख्या : 49

संरक्षक

प्रोफेसर डी.सी. जोशी
कुलपति, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

सम्पादक मण्डल

डॉ. एस.के. जैन
निदेशक प्रसार शिक्षा
प्रधान संपादक एवं प्रकाशक

डॉ. के.सी.मीना
सहा. आचार्य (प्रसार शिक्षा)
संपादक एवं समन्वयक

डॉ.राकेश कुमार बैरवा
सहा. आचार्य (शस्य विज्ञान)
संपादक

डॉ. डी.के. सिंह
आचार्य (उद्यान विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. महेन्द्र सिंह
आचार्य (पशुपालन)
सह–संपादक

डॉ. सेवाराम रूण्डला
विषय विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान)
सह–संपादक

श्रीमती गुंजन सनाढ्य
विषय विशेषज्ञ (गृह विज्ञान)
सह–संपादक

सुश्री सरिता
तकनीकी सहायक
सह–संपादक

मनोनीत सलाहकार मण्डल

डॉ.प्रताप सिंह
निदेशक, अनुसंधान

डॉ. आई.बी. मौर्य
अधिष्ठाता, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

डॉ. एम.सी. जैन
अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, कोटा

डॉ. मुकेश चन्द गोयल
निदेशक, पी.एम.एण्ड.ई.

सदस्यता शुल्क

- ☞ त्रैमासिक (प्रति अंक) 30 रू.
- ☞ वार्षिक (चार अंक) 100 रू
- ☞ आजीवन (15 वर्ष)1000 रू.

विज्ञापन दरें

(i)	अन्तिम सम्पूर्ण (रंगीन)	रू. 10,000/-
(ii)	प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे (रंगीन)	रू. 6,000/-
(iii)	अन्तिम आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 5,000/-
(iv)	प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 3,000/-
(v)	अन्दर का सम्पूर्ण पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 4,000/-
(vi)	अन्दर का आधा पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 2,000/-

नोट : यदि विज्ञापन वर्ष के सभी चार अंकों के लिए दिया जाता है तो उपरोक्त दरों में 25 प्रतिशत की कमी की जायेगी।

सदस्यता एवं नवीनीकरण हेतु

खाता धारक	: DEE, Agriculture University, Kota
बैंक	: ICICI BANK, Nayapura, Kota
खाता संख्या	: 687801700345
IFSC	: ICIC0006878

लेख एवं सुझाव भेजने का पता

"अभिनव कृषि"
प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
बोरखेड़ा, बारां रोड़ कोटा (राजस्थान) – 324001
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com दूरभाष : 0744- 2326727

प्रकाशक: प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
मुद्रक : डामयण्ड प्रिन्टर्स, नई धानमण्डी, कोटा (राज.) मो. 9414231079

नोट–"अभिनव कृषि" में प्रकाशित आलेख में दी गई जानकारी स्वयं लेखकों की है। किसी भी प्रकार के विवाद के लिए प्रकाशक एवं सम्पादक मण्डल जिम्मेदार नहीं होगा। तथा इसमें प्रकाशन हेतु लेखकों का सदस्य होना अनिवार्य है।

अभिनव कृषि

वर्ष–3 अंक–3 सितम्बर–2021

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	किचन गार्डन: पौष्टिक आहार के लिए जरूरी राजेश कुमार शर्मा, राजेंद्र कुमार यादव, अरविंद नागर एवं रामराज करवासरा	1-3
2.	धनियां उत्पादन की उन्नत खेती प्रीति वर्मा, चमन जादौन, उदिति धाकड़, प्रताप सिंह एवं डी.एल. यादव	4-6
3.	चना उत्पादन की उन्नत तकनीकी प्रकाश चन्द गुर्जर, आकाश तंवर एवं राजाराम बुनकर	7
4.	रबी फसलों में सिंचाई एवं उर्वरक प्रबंधन हरफूल मीणा, प्रताप सिंह, राजेन्द्र यादव, सत्यनारायण मीणा एवं उदिति धाकड	8-11
5.	अलसी की उन्नत खेती मोनिका मीणा, सत्यनारायण रेगर एवं दीपक मीना	12
6.	औषधीय गुणों से भरपुर इसबगोल अंजू बिजारणियाँ, रोशन कुमावत एवं रमेश चौधरी	13-14
7.	रबी फसलों में खरपतवार नियंत्रण करके अधिक उत्पादन लें शंकर लाल यादव, बलदेव राम, गणेश नारायण यादव, खजान सिंह, राजेन्द्र कुमार यादव, प्रताप सिंह, रणवीर यादव एवं डी.एल.यादव	15-17
8.	प्रमुख दलहनी फसलों में कीट व रोग प्रबंधन संदीप कुमार चौधरी, ममता देवी चौधरी, सुमित्रा देवी बम्बोरिया एवं अरविन्द सिंह तेतरवाल	18-20
9.	गेहूँ की फसल में खरपतवार नियंत्रण उदिति धाकड़, बलदेव राम, चमन जादौन एवं शंकर लाल यादव	21-23
10.	मृदा स्वास्थ प्रबंधन द्वारा रबी फसलों हेतु खेत की तैयारी कैसे करें अनिल कुमार, आकाश तंवर एवं सरिता	24-26
11.	आलू में मृदा व कन्द जनित रोगों का प्रबंधन डी.एल. यादव, प्रतिक जैसानी, जे के पटेल एवं शिखा शर्मा	27-29
12.	गुलदाउदी की उन्नत खेती अशोक चौधरी, आशुतोष मिश्रा, राजेश चौधरी, मनीषा धायल एवं सुरेश कुमार जाट	30-31
13.	फलदार पौधों में कीट प्रबंधन जे. के. गुप्ता, आर. एन. शर्मा एवं उदयभान सिंह	32-33
14.	गिलोय : पोषण भी स्वास्थ भी यामिनी टॉक, चिराग गौतम एवं विनोद कुमार यादव	34-35
15.	यांत्रिकरण से फसल उत्पादन व उत्पादकता में वृद्वि एच. पी. वर्मा, राजेश कुमार, मोहन लाल जाट एवं भूपेन्द्र सिंह	36-37
16.	किसानों के लिए सुरक्षात्मक वस्त्र सत्यनारायण रेगर, भैरू लाल कुम्हार, नरेन्द्र नटवाडीया, विजय कुमार एवं मोनिका मीणा	38
17.	सुरक्षित बीज भण्डारण : आज की आवश्यकता कल की जरूरत मोहन लाल जाट, एच. पी. वर्मा, भाग चन्द धायल एवं राजेश कुमार	39-41
18.	मक्खन घास उत्पादन की उन्नत तकनीकी हरफूल मीणा, राजेन्द्र कुमार यादव, विनोद कुमार यादव, सुश्री मनोज एवं उदिति धाकड़	42
19.	साईलेज संरक्षण की आसान विधि घनश्याम मीणा, आर. के. बैरवा एवं कमला महाजनी	43-44
20.	किसान प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का लाभ कैसे उठाये प्रवेश सिंह चौहान, एस.एस.सिसोदिया, पारुल मेंर्तिया एवं एन. आर. मीणा	45-46
21.	जैविक खेती और किसान राजेश कुमार, एच. पी. वर्मा, भूरी सिंह, वर्षा गुप्ता, बलदेव राम, खजान सिंह एवं के. सी. मीना	47
22.	तिलहनी फसलों के लिए डीएपी से बेहतर है एसएसपी और यूरिया का संयोजन गौरव प्रकाश, मनोज, पिंकी यादव, संगीता डांगा एवं मनोज कुमार शर्मा	48-49

डॉ. एस.के. जैन
निदेशक (प्रसार शिक्षा)

Directorate of Extension Education
प्रसार शिक्षा निदेशालय
AGRICULTURE UNIVERSITY, KOTA
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Borkhera, Baran Road, Kota 324 001 (Raj.)
बोरखेडा, बारां रोड, कोटा 324001 (राज.)

प्रधान संपादक की कलम से.....

हमारे देश में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है और देश की खुशहाली के लिए कृषि व्यवस्था का मजबूत होना अति आवश्यक है। मुख्यतः मानसून पर निर्भरता, आजिविका का स्त्रोत, छोटी जोत, श्रम की अधिकता, छिपी बेरोजगारी, उत्पादन के पारंपरिक तरीके, खाद्य फसलों का प्रभुत्व, कम कृषि उत्पादन आदि भारतीय कृषि की मुख्य विशेषताएं है।

मुझे आशा है कि किसान भाईयों ने इस वर्ष हुई अच्छी बारिश का विभिन्न जल संरक्षण विधियों, जैसे खेत की मेड़बन्दी, खेत तलाई, तालाबों एवं बाधों द्वारा जल संग्रहण किया होगा, जिसका उपयोग आगामी रबी फसलों में हो सकेगा, जिससे रबी फसलों की अच्छी पैदावार होने की उम्मीद करता हूं।

हमारे किसानों के लिए यह सबसे व्यस्ततम समय है जिसमें खरीफ फसलों की कटाई हकाई तथा रबी फसलों के लिए खेत तैयारी व आदान व्यवस्था की जा रही है। अतः किसान भाईयों को सलाह दी जाती है कि डी.ए.पी. खाद की कमी का पूर्व अनुमान को ध्यान में रखकर सिंगल सुपर फास्फेट का उपयोग करें, साथ–साथ समय पर गुणवत्तायुक्त, बीज, खाद व अन्य आदानों की व्यवस्था करें।

प्रस्तुत अंक में विभिन्न शोध विद्यार्थियों, विषय विशेषज्ञों से प्राप्त समय सामयिकी कृषि तकनीकीयों पर आलेखों को सम्मिलित किया गया है। जिनके माध्यम से रबी फसलों की उत्पादन तकनीकीयां, खरपतवार नियंत्रण, उन्नत कृषि यंत्रों का उपयोग, सुरक्षित बीज भण्डार, किचन गार्डनिंग, मक्खन घास उत्पादन, साईलेज संरक्षण विधि के साथ–साथ फल फूलों की उन्नत तकनीक आदि विषयों पर वैज्ञानिक जानकारी देने का प्रयास किया गया है। आशा करता हूं आप सभी पाठकों के लिए यह लाभकारी सिद्ध होगें।

में पत्रिका के सभी लेखकों, संपादक एवं सलाहकार मण्डल के सदस्यों को इस अंक के प्रकाशन की हार्दिक बधाई एवं शुभकामनायें प्रेषित करता हूं।

(एस.के. जैन)

किचन गार्डन: पौष्टिक आहार के लिए जरूरी

राजेश कुमार शर्मा, राजेंद्र कुमार यादव, अरविंद नागर एवं रामराज करवासरा
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

किचन गार्डन को पोषण उद्यान के साथ–साथ घर के बगीचे के रूप में भी जाना जाता है, जिसमें पूरे साल परिवार की दैनिक सब्जी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आवासीय घरों में या उनके आसपास के क्षेत्र में जड़ी–बूटियों, फूलों, सब्जियों और फलों के पौधों को लगाया जाता है। विभिन्न बारहमासी फलों पपीता, अनानास, केला, नींबू आदि और सब्जी पौधों जैसे ड्रमस्टिक, करीपत्ता, बीन, चाकुरमनी आदि, फूलों की फसल जैसे चंपा, चमेली, गेंदा आदि को घरो में उगाने का पुराना अभ्यास है। चौड़ी पत्ती वाली सरसों, टमाटर, बैगन, प्याज, लहसुन, पत्तेदार सब्जियां, मिर्च, फ्रेंच बीन्स, कद्दू जैसी छोटी अवधि की फसलों के साथ–साथ परिवार को पोषण देने के लिए तुलसी आदि पौधे किचन गार्डन के लिये अच्छी तरह से अनुकूल हैं।

किचन गार्डनिंग का महत्व

फलों (90 ग्राम प्रति दिन प्रति व्यक्ति) और सब्जियों (300 ग्राम प्रति दिन प्रति व्यक्ति) के अनुशंसित दैनिक–आहार भत्ता (आरडीए) को पूरा करने के लिए पोषण संबंधी बागवानी महत्व प्राप्त कर रही है। देश में लगातार बढ़ती जनसंख्या के कारण अकेले किसानों द्वारा बड़े पैमाने पर फलों और सब्जियों का उत्पादन दैनिक–आहार भत्ता की आवश्यकता को पूरा करने में असमर्थ है। कीट और रोग मुक्त सब्जियों का उत्पादन करने के लिए, वाणिज्यिक उत्पादक अक्सर कीटनाशकों के अंधाधुंध उपयोग का सहारा लेते हैं, जिससे गंभीर स्वास्थ्य संकट पैदा हो सकते हैं। ऐसी परिस्थितियों में स्वस्थ और अवशेष मुक्त सब्जियों का उत्पादन करने के लिए अपने स्वयं के रसोई उद्यान को बढ़ाने से अतिरिक्त लाभ मिला है। साल भर दैनिक आहार स्वच्छता वस्तुओं की कम लागत के उत्पादन तथा घर के बगीचे से कुछ पैसे कमाने का मौका की वजह से किचन गार्डनिंग अधिक लोकप्रिय है। फलों और सब्जियों से कार्बोहाइड्रेट (आलू, शकरकंद, कसावा, केले और मक्का), प्रोटीन (सेम, मटर, लीमा बीन्स, पपीता, टमाटर), विटामिन और खनिज (खीरे, ब्रोकोली, और हरी बीन्स), और फाइबर (स्विस चार्ड, ड्रमस्टिक) आदि प्राप्त होते है।

रंगीन सब्जियों को उगाने की योजना भी रंगों को आहार में शामिल करने के लिए महत्वपूर्ण है, जिन्हें इंद्रधनुष आहार कहा जाता है। फल और सब्जियों जैसे नारंगी और पीले रंगों में रंगद्रव्य की उपस्थिति के कारण इसमें बीटा–कैरोटीन या प्रो–विटामिन–ए, विटामिन–सी और पोटेशियम होते हैं जो आंखों की दृष्टि को अच्छा रखने में मदद करता है, त्वचा को स्वस्थ बनाए रखता है, प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है, त्वचा के उपचार और पुनर्जनन प्रक्रियाओं में मदद करता है। फोलिक एसिड, ल्यूटिन, विटामिन–सी और पोटेशियम से युक्त आहार हरे रंग के स्वरूप को सामान्य रूप से विकसित करने में मदद करता है, एलिसिन और अन्य अवयवों के साथ जोड़ा जाने वाला सफेद रंग उच्च कोलेस्ट्रॉल और रक्तचाप को कम करने में मदद करता है, एंटीऑक्सिडेंट और फाइटो–रसायनों के साथ बैंगनी रंग पूरक उम्र बढ़ने की प्रक्रिया को धीमा करने में मदद करता है, कैंसर कोशिकाओं के निर्माण को रोकता है, स्मृति हानि को रोकने में मदद करता है, आहार में लाल रंग के लाइकोपीन, एंथोसाइनिन और फाइटोकेमिकल्स स्मृति हानि को रोकने, कैंसर को रोकने और मूत्र पथ के संक्रमण को रोकने में मदद करता है।

किचन गार्डनिंग के सिद्धांत

किचन गार्डन डिजाइन करते समय निम्नलिखित सिद्धांतों पर विचार किया जाना चाहिए।

- भूमि का चयन घर के पीछे की तरफ में करना चाहिए। आयताकार आकार वर्गकार आकार से अधिक पसंद किया जाता है ।
- किचन गार्डन को कभी भी छायादार जगह पर नहीं लगाना चाहिए, बल्कि इसे दिन के अधिकांश भाग में सूरज की रोशनी प्राप्त होनी चाहिए।
- किचन गार्डन का खाद्य का इस रूप में हो की बगीचे के सभी हिस्सों तक पहुंच की अनुमति देना चाहिए। जल्दी उगने वाले फलदार पेड़ जैसे पपीता, कागजी नींबू आदि बगीचे के उत्तर की ओर स्थित होना चाहिए ताकि वे अन्य फसलों को छाया न दें ।
- लताओं जैसे ककड़ी, मटर आदि को बाड़ पर प्रशिक्षित किया जा सकता है।
- लंबी अवधि के लिए सब्जियों की स्थिर आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए एक विशेष फसल की कई बुवाई जैसे कम अंतराल पर मेथी, मूली, भिंडी, फूलगोभी आदि करनी चाहिए।
- क्यारी को अलग करने वाले मेड का उपयोग जड़ वाली सब्जियां जैसे मूली, शलजम आदि के लिए किया जाना चाहिए।
- धीमी गति से बढ़ने वाली फसलों जैसे फूलगोभी, पत्तागोभी, बैंगन आदि के बीच का अंतर–स्थान का उपयोग जल्दी उगने वाली फसलों जैसे शलजम, मूली, पत्ती बीट आदि के लिए किया जाना चाहिए।
- सब्जियों और उसकी किस्मों के चयन सहित उचित योजना को बुवाई से पहले अच्छी तरह से किया जाना चाहिए ताकि भरमार के बगैर पोषक तत्वों से भरपूर ताजी सब्जियों की नियमित आपूर्ति सुनिश्चित हो सके।

किचन गार्डन के लिए फसलों का चयन दो कारकों पर निर्भर करता है

यानी बगीचे का आकार और परिवार की पसंद। किचन गार्डन में केवल वे सब्जियां उगाई जाती हैं जो इस क्षेत्र के अनुकूल हैं और संतोषजनक उपज देती हैं। क्षेत्र और मौसम के लिए उपयुक्तता के अनुसार खेती की जानी चाहिए। वरीयता उन फसलों को दी जाती है जहां पर खाद्यता और खाद्य मूल्य के दृष्टिकोण से ताजगी महत्वपूर्ण है। ऐसी फसलों में टमाटर, मिर्च, बीन्स, मटर, सलाद की फसलें, पत्तेदार सब्जियाँ आदि शामिल हैं।

किचन गार्डन के प्रकार

1 फलों और सब्जियों से युक्त घर का बगीचा ।

2 केवल सब्जियों से युक्त घर का बगीचा ।

आवासीय भूखंड के आकार के अनुसार किचन गार्डन भिन्न प्रकार के होते हैं।

अ. बड़े आकार का किचन गार्डन

ब. मध्यम आकार का किचन गार्डन

स. छोटे आकार का किचन गार्डन

द. टैरेस गार्डनः शहरों / कस्बों में, जहाँ केवल बहुत कम जगह उपलब्ध है, कोई भी छत या छत पर रखे बर्तन, ड्रम और अन्य कंटेनरों में सब्जियाँ उगा सकता है।

किचन गार्डन का खाका (लेआउट)

यह भूमि की उपलब्धता, परिवार में व्यक्तियों की संख्या और इसकी देखभाल के लिए उपलब्ध खाली समय पर निर्भर करता है। हालांकि, योजनाबद्ध आरेख किचन गार्डन का प्रतिनिधित्व है जो की चित्र 1 में प्रस्तुत किया गया है। लगभग पांच प्रतिशत भूमि (200 एम^2) पूरे वर्ष में पांच सदस्यों वाले परिवार को पोषण देने के लिए पर्याप्त है। एक चौकोर भूखंड या भूमि की एक लंबी पट्टी की तुलना में एक मिश्रित फसलों (चित्र 1) के साथ आयताकार उद्यान को प्राथमिकता दी जाती है तथा गहरे जड़ वाले पौधों के अलावा उथले जड़ वाले छाया सहिष्णु पौधे लगाए जाते है

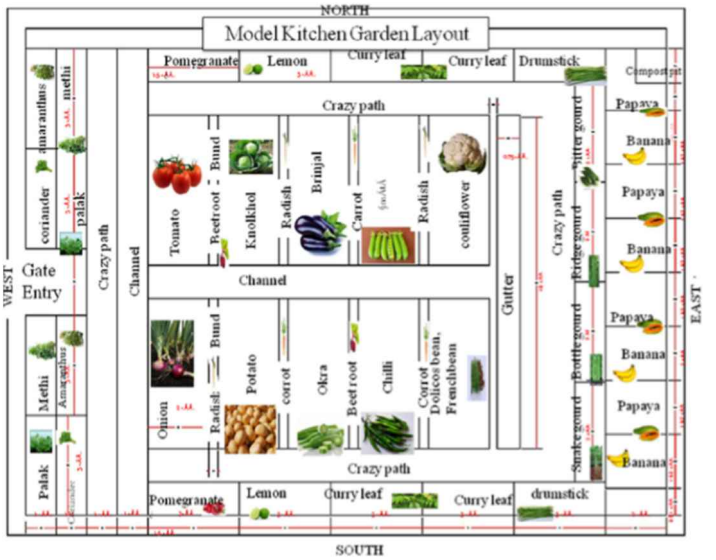

चित्रः 1 रसोई उद्यान लेआउट का योजनाब) प्रतिनिधित्व (200 एम^2 क्षेत्र)

जो मिट्टी की उत्पादकता को बढ़ाकर जगह के अपव्यय से बचा जाता है । फूलों, फलों और सब्जियों के पौधों के मिश्रित रोपण से कीटों और रोगों का प्रकोप कम होता है विशेष रूप से गेंदे के फूलों की महक और पत्तियां कीटों को पीछे हटाने में मदद करती हैं, जड़ से निकलने वाली रिसाव मिट्टी में नेमाटोड को कम करती हैं। हालाँकि, किचन गार्डन के रखरखाव के लिए नीम के तेल, पुंगमिया तेल और एनएसकेइ 4% के छिड़काव से कीटों और बीमारियों को नियंत्रित करने के लिए बेहतर पाया गया लेकिन उच्च दबाव वाले पानी के स्प्रे या साबुन के पानी के स्प्रे और तरल खाद का इस्तेमाल भी कीट और बीमारी को नियंत्रित करता है। फसल अनुक्रमों का चयन इस तरह से किया जाता है कि बगीचे में साल भर फसल लगी रहे । फसलों और उनकी किस्मों को वैज्ञानिक रूप से अपने समृद्ध पोषक तत्वों और कम से कम कीट और रोग की समस्याओं के लिए चुना जाता है, इस प्रकार कीटनाशकों का उपयोग कम से कम होता है

तालिका : 1 किचन गार्डन में उगाई जाने वाली सब्जियों की अंतर दूरी आवश्यकता

सब्जी का नाम	अंतर दूरी (सेमी)	सब्जी का नाम	अंतर दूरी (सेमी)
लौकी, करेला, गिलकी, तोरई	80 X 45	मिर्च	60 X 45
टमाटर, ककड़ी, लंबा तरबूज	80 X 30	भिण्डी	45 X 15
शिमला मिर्च, शकरकंद	60 X 30	अरबी	45 X 20
फूलगोभी, पत्ता गोभी, ब्रोकोली	45 X 30	मटर	30 X 7.5
बैंगन, लेट्यूस, ऐमारैंथस, लब लब	45 X 30	लोबिया	30 X 15
मूली, गाजर, शलजम	45 X 7.5	धनियां	15 X 10
चायनिज गोभी	30 X 20	मैथी	15 X 10
प्याज, लहसुन	15 X 7.5	पुदीना	15 X 15
सब्जी सरसों	15 X 10	पालक	15 X 05

तालिका : 2 उत्तर भारतीय मैदानों में किचन गार्डनिंग के लिए टेंटेटिव मासिक कार्यक्रम

महिना	कार्यक्रम
जनवरी	खरबूजा, तरबूज, धनिया, लेट्यूस, वसंत आलू, यूरोपीयन मूली और फूलगोभी (यदि पहले नहीं लगाया गया है) की बुवाई ।
फरवरी	भिंडी, तोरई, ककड़ी, स्नैपमेलन, चौलाई, लौकी, कद्दू, समर स्क्वैश, करेला, यूरोपियन मूली, चुकंदर, नुकीली लौकी, बैंगन, मिर्च और टमाटर की बुवाई ।
मार्च	भिंडी, चौलाई और चुकंदर की बुवाई दोहराएं। यदि पहले से ही नहीं बोया गया हो तो लोबिया, क्लस्टर बीन, गोल खरबूजा और अन्य उपर्युक्त फसलें। रतालू, पुदीना और आटिचोक की बुवाई ।
अप्रेल	मार्च में बोई गई फसलों के साथ जारी रखें।
मई	बरसात के मौसम की भिंडी, तोरई, मूली, खीरा, लौकी, करेला और कद्दू की बुवाई करें।
जून	मई में बोई गई फसलों के साथ जारी रखें और अगेती फूलगोभी, क्लस्टर बीन, सेम, गोल तरबूज, शकरकंद और मूली भी बोएं।
जुलाई	अगेती फूलगोभी, क्लस्टर बीन, लौकी, भिंडी, टमाटर, डोलिचोस बीन, मिर्च और बैंगन बोएं। मूली, चुकंदर और फूलगोभी की भी बुवाई करें।
अगस्त	मिर्च, फूलगोभी, चुकंदर, शलजम (एशियाई प्रकार), और गाजर का रोपण । इसके अलावा पत्ता गोभी, मेथी, नोल–खोल, चायनिज गोभी, प्याज (खरीफ प्याज), चुकंदर और धनिया बोएं।
सितम्बर	अगेती मटर, धनिया, प्याज (खरीफ प्याज), मूली, गाजर, शलजम, अजवाइन, चुकंदर, डोलिचोस बीन, फूलगोभी द्धदेर से समूहऋ, गोभी, नोल–खोल, लेट्यूस, पत्ता चुकंदर, आलू और मटर की बुवाई करें।
अक्टूबर	खुरासानी अजवायन, लेट्यूस, पार्सनिप, आलू, शलजम, चुकंदर, मूली, लहसुन, मटर, फ्रेंच बीन, प्याज और नोल–खोल।
नवम्बर	अक्टूबर के लिए उल्लिखित फसलों की बुवाई करें और मटर, टमाटर और पालक भी बोएं।
दिसम्बर	टमाटर, पालक, देर से फूलगोभी और मटर की बुवाई करें, अगर पहले से नहीं लगाया गया हो।

किचन गार्डन का प्रबंधन करना

किचन गार्डन को सजावटी बगीचे से अलग रखना चाहिए। किचन गार्डन को बड़े आयताकार क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है और प्रत्येक को आगे विभाजित किया जा सकता है। संकीर्ण पथ हमेशा आने जाने के लिए आयतों के बीच छोड़ दिए जाते हैं। सब्जियां उगाने के लिए समृद्ध, काफी बलुई मिट्टी उपयुक्त हैं। यदि जड़–कंद की फसलें लेनी हैं, तो मिट्टी रेतीली दोमट होनी चाहिए। यह सलाह दी जाती है कि एक ही फसल को एक ही मिट्टी पर बार–बार न उगाएं, इसके बजाय फसलों को नियमित आवर्तन पर लगाएं। लगातार फसल होने के कारण मिट्टी बह जाती है। । प्लॉट को कुछ समय के लिए खाली रखा जाता है और इस तरह सूर्य–प्रकाश के संपर्क में आता है। यह अवांछनीय जीवों के उन्मूलन में मदद करता है। मवेशी खाद, घोड़ा खाद, तेल खली आदि खाद के रूप में उपयोग किए जाते हैं। पत्तेदार सब्जी के बीजों को व्यापक डाली द्वारा बोया जाता है और मिट्टी की पतली परत के साथ कवर किया जाता है। गाजर, मूली को ड्रिलिंग द्वारा बोया जाता है जबकि कुछ फ्रेंच फलियों को मिट्टी में दबाया जाता है। विभिन्न प्रकार के पौधों के लिए विभिन्न प्रकार के संचालन की आवश्यकता होती है जैसे अर्थिंग (पौधों के आधार की ओर मिट्टी खींचना), ब्लैंचिंग (पत्तियों के साथ युवा शूट को कवर करना), थीनीग (पौधों और पत्तियों को नियमित अंतराल पर निकालना) और निराई (खरपतवार निकालना)। पीछे की तरफ बाड़ के पास कुछ फलदार पौधे उगाए जाते हैं जैसे पपीता, जैक फल, कस्टर्ड सेब, अमरूद, जामुन और ड्रम स्टिक, नीम आदि। छोटे पौधों को पानी देते समय, सुनिश्चित करें कि नमी सही मात्रा में हैं। पौधों के लिए पानी की मात्रा, वास्तव में इस बात पर निर्भर करते हैं कि आप उन्हें कहाँ रखते हैं और उस जगह की नमी का स्तर क्या है। गर्मियों के दौरान आपको उन्हें मानसून की तुलना में अधिक बार पानी देने की आवश्यकता होती है।

धनियां उत्पादन की उन्नत खेती

प्रीति वर्मा, चमन जादौन, उदिति धाकड़, प्रताप सिंह एवं डी.एल. यादव
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

भारत में धनिये का प्राचीन काल से ही बीजीय मसालों में मुख्य स्थान रहा है। इसके दानों में पाये जाने वाले वाष्पशील तेल के कारण ही भोज्य पदार्थ को स्वादिष्ट एवं सुगन्धित बनाता है। इसके दानों में वाष्पशील तेल की मात्रा 0.1 प्रतिशत से 1.7 प्रतिशत तक पाई जाती है। जो कि किस्म वातावरणीय कारकों पर निर्भर करती है वाष्पशील तेल में लगभग 26 प्रतिशत हाइड्रोकार्बन और शेष ऑक्सीजन युक्त यौगिक होते है। जिनमें लीनोकॉन व कोन्ड्रियोल मुख्य है। धनिये के दानों एवं पत्तियों में विटामिन "ए" प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। धनिये के बीजों में 11.2 प्रतिशत नमी, 14.1 प्रतिशत एल्ब्यूमिनाइड, 16.1 प्रतिशत वसा, 21.5 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेड, 32.6 प्रतिशत रेशे एवं 4.4 प्रतिशत भस्म होती है। वाष्पशील तेल निकालने के बाद भी इसके बीजों का उपयोग फिर से किया जा सकता है। विश्व में मोरक्को, रोमानिया, फ्रांस, स्पेन, इटली, हॉलेण्ड, यूगोस्लोविया, भारत, मिश्र तथा रूस धनियां के मुख्य उत्पादक देश है। भारत में इसकी खेती मुख्यतः राजस्थान, मध्यप्रदेश, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, बिहार, उत्तर प्रदेश तथा कर्नाटक में की जाती है। राजस्थान में कोटा, बूंदी, झालावाड़ एवं बांरा धनिये उत्पादन के मुख्य जिले है। राजस्थान के उत्पादन का 95 प्रतिशत पैदावार एवं क्षेत्रफल इसी क्षेत्र से मिलती है। वैसे हरी पत्तियों के लिए धनियां भारत के प्रायः सभी भागों में उगाया जाता है।

उपयोग : पिसा हुआ धनिया, करी पाउडर का मुख्य अवयव होता है। इसके दानों को साबुत या पीसकर अचार, सॉस, मिठाइयाँ, कंफेक्शनरी आदि खाद्य पदार्थो को सुगन्धित या स्वादिष्ट बनाने में उपयोग किया जाता है। इसके दानों से निकाले गये वाष्पशील तेल को सगंधीय द्रव्य (परफ्यूम) व खुशबूदार साबुन बनाने के काम में लाते है। यह वाष्पशील तेल चाकलेट, कैण्डी, सीलबन्द खाद्य पदार्थो, सूप व मदिरा आदि को सुगन्धित करने में काम में लिया जाता है। हरे धनिये के मुलायम तने व पत्तियों को चटनी बनाने, शाक, सब्जी, सूप व सलाद को स्वादिष्ट व आकर्षक बनाने में उपयोग किया जाता हैं

औषधीय महत्व : मसालों के अलावा धनिये का प्रयोग प्राचीन काल से ही विभिन्न प्रकार की दवाओं के रूप में भी उपयोग होता रहा है। कई प्रकार की आयुर्वेदिक औषधियों में विशेषकर अपच, दस्त, पेचिश, जुकाम एवं मूत्र से सम्बन्धित रोगों में धनिये का बीज काम आता है। मूलतः धनिया मूत्रवर्धक, वायुनाशक, बलवर्धक, उदरशूलनाशक तथा उत्तेजक है। उपरोक्त गुणों के कारण से ही यह औषधि के रूप में काम में लाया जाता है। एलोपैथिक दवाओं में भी धनिये के वाष्पशील तेल का उनकी बदबू को दबाने के लिए उपयोग होता हैं

जलवायु : भारत में धनिये की मुख्यतः सभी प्रकार की जलवायु वाले क्षेत्रों में जहां तापमान अधिक न हो तथा वर्षा का वितरण ठीक हो, सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। शुष्क एवं ठण्डा मौसम अधिक उपज के लिए अनुकूल रहता है। जिन क्षेत्रों में फरवरी–मार्च में जब रबी की फसल में फूल आ रहे हो और पाले की सम्भावना हो तो वह क्षेत्र धनिये की फसल के लिए उपयुक्त नहीं रहता है। दाने बनते समय अधिक तापमान व तेज हवा उपज पर तथा वाष्पशील तेल पर विपरीत प्रभाव डालता है। पुष्प आना प्रारम्भ होने पर अगर आकाश बादलों से आच्छादित रहे तो चैंपा कीट तथा बीमारियों के प्रकोप की संभावना बढ़ जाती है।

भूमि का चुनाव एवं तैयारी : अच्छे जल निकास वाली जीवांश युक्त दोमट मिट्टी इसकी खेती के लिए उपयुक्त होती है। लेकिन बारानी फसल हेतु काली या अन्य भारी मिट्टी जिनमें पानी संचय करने क्षमता हो, उपयुकत रहती है। खेत की जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद 3–4 जुताई देशी हल से करके पाटा चलाकर खेत की अच्छी तरह तैयार कर लेना चाहिए। सिंचित क्षेत्र में भूमि की तैयारी पलेवा कर के करें। बारानी भूमि में नमी जैसे ही कम होकर उचित स्तर पर आ जाये तथा भूमि जोतने लायक बन जाये, जुताई प्रारम्भ कर देना चाहिए और जुताई के बाद तुरन्त पाटा लगा दें।

बुवाई का समय : धनिया मुख्यतः रबी की फसल है। बुवाई के लिए सर्वोत्तम समय मध्य अक्टूबर से मध्यम नवम्बर तक है क्योंकि इस समय तापमान उचित रहता है। पाले से बचाने के लिए बुवाई ऐसे समय पर करेकं जिसमें फूल आते समय पाला पड़ने की संभावना नहीं रहे।

बीज की मात्रा : अच्छे उत्पादन के लिए 15 से 20 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त रहता है। बीज को रगड़ कर दो भागों में बुवाई से पूर्व विभाजित कर लेना चाहिए।

बीजोपचार : बीजो को दो भागों में विभाजित करने के पश्चात् बीजोपचार अवश्य करना चाहिए। बीजों को बुवाई से पूर्व कार्बेन्डिजिम 0.75 ग्राम + थायरम 1.5 ग्राम या 3 ग्राम थायरम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें।

बुवाई की विधि : बीजों की बुवाई हल के पीछे कूड में करें। इसमें पंक्ति से पंक्ति के बीच की दूरी 30 सेमी तथा पौधे से पौधे के बीच की दूरी 10–12 सेमी से अधिक नहीं रखें। बीज की गहराई 6–8 सेमी अधिक न रखें

खाद व उर्वरक : खेत की तैयारी के समय अंतिम जुताई पर दस से बीस टन गोबर की खाद प्रति हैक्टेयर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त असिंचित क्षेत्रों में 20 किलो नत्रजन, 30 किलो फॉस्फोरस और 20 किलो पोटाश उर्वरकों के रूप में अंतिम जुताई के समय खेत में मिला देना

चाहिए। सिंचित क्षेत्रों में नत्रजन की मात्रा 50 किलो प्रति हैक्टेयर तक बढ़ा सकते है। सिंचित क्षेत्रों में फॉस्फोरस तथा पोटाश की सारी मात्रा एवं नत्रजन की आधी मात्रा खेत की तैयारी के समय डाल दें। नत्रजन की शेष आधी मात्रा को दो भागों में विभाजित कर पहली चौथाई मात्रा पहली सिंचाई के समय तथा शेष मात्रा फूल आते समय डालें।

सिंचाई : सिंचित क्षेत्र में पलेवा के अतिरिक्त दो सिंचाई की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई शाखा बनते समय बुवाई के 50 से 60 दिन बाद तथा दूसरी सिंचाई दाना बनते समय 90 से 100 दिन में करनी चाहिए।

निराई–गुडाई : असिंचित क्षेत्र में बुवाई के 40 से 45 दिन बाद जब पौधे 7 से 8 सेमी बड़े हो जायें तब निराई–गुडाई करें। सिंचित फसल में दोनों सिंचाईयों के बाद हल्की निराई–गुडाई कर देना चाहिए। यदि फसल बड़े क्षेत्र में उगाई गई है तो अंकुरण से पूर्व पेन्डामिथालिन 1.0 किलोग्राम सक्रिय तत्व का प्रति हैक्टेयर की दर से खेत में नमी की अवस्था में छिड़काव करें। इसके बाद बुवाई के 40–50 दिन बाद एक निराई–गुडाई करनी चाहिए।

धनिये की उन्नत किस्में

आर.सी.आर. 436 : यह अधिक उपज देने वाली अल्प अवधि की किस्म है जो लगभग 110–120 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसे सिंचित एवं असिंचित दोनों ही स्थितियों में बोया जा सकता हैं इसकी ऊँचाई लगभग 65 सेमी होती है। तना मजबूत होता है। अतः आड़ी नहीं गिरती है। इसके 1000 दानों का भार 14 से 15 ग्राम होता है। सिंचित क्षेत्र में इसकी उपज लगभग 16 क्विंटल तथा असिंचित क्षेत्र में लगभग 11 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है। यह किस्म तना सूजन, छाछ्या रोग से तथा एफिड से सहनशील होती है।

आर डी 385 (राजेन्द्र धनिया 1) : इस किस्म के पौधे की ऊंचाई 90 सेमी. तथा परीक्षण भार 15–17 ग्राम है। यह किस्म 117 दिन में पककर 13–15 क्विं/ है. दाना उपज देती है एवं इसमें 0.45 प्रतिशत से अधिक वाष्पशील तेल की मात्रा पायी जाती है। यह किस्म लौंगिया रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधी पायी गयी है।

प्रताप राज धनिया 1 (आरकेडी 18) : यह किस्म राजस्थान के सिंचित एवं उच्च उर्वरता वाली भूमियों हेतु उपयुक्त पाई गई है। इस किस्म के फूल गुलाबी एवं दाने मध्यम मोटे होते है। यह किस्म 100–105 दिन में पककर 17–22 क्विंटल प्रति हैक्टेयर दाना उपज देती है एवं इसमें 0.40 प्रतिशत से अधिक वाष्पशील तेल की मात्रा पायी जाती है। यह किस्म लौंगिया रोग व चैंपा कीट के प्रति मध्यम प्रतिरोधी एवं छाछ्या रोग के प्रति सहनशील पायी गयी है। इस किस्म में आड़ी गिरने के प्रति प्रतिरोधकता भी पायी जाती है।

अजमेर धनिया–1 : इस किस्म के पौधे लंबे, बीज आकार में मध्यम एवं गोल होते हैं। तथा इस के बीज में 0.6 वाष्पशील तेल की मात्रा पाई जाती है। पत्तियों और बीज के उत्पादन के लिए उपयुक्त है। इसकी औसत उपज 12.5 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म लोंगीया रोग के लिए प्रतिरोधी हैं एवं पाउडर मिल्डयो के प्रति सहनशील हैं। यह किस्म ऑफ–सीजन के दौरान पत्तियों के लिए भी उपयुक्त है।

अजमेर धनिया –2 : इस किस्म के पूधे अर्द्ध खड़े हुते हैं, बीज आकार में मध्यम होते हैं। बीज आकार अंडाकार होता है और निर्यात के उद्देश्य के लिए उपयुक्त होता है। इस किस्म को पत्तियों और बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त है। इस के बीज में 0.54 वाष्पशील तेल की मात्रा पाई जाती है। औसत उपज 12.9 क्विंटल / हेक्टर यह किस्म लोंगीया रोग के लिए प्रतिरोधी एवं पाउडर फफूंदी के प्रति सहनशील हैं। यह किस्म ऑफ–सीजन के दूरान पत्तियों के लिए भी उपयुक्त है।

पौध संरक्षण

बीमारियाँ एवं उपचार

1. **उखटा (विल्ट) रोग :** यह रोग पौधों की जड़ों में लगता हैं रोगी पौधा मुरझा कर सूख जाता है। वैसे यह रोग फसल की किसी भी अवस्था में लग सकता हैं।

उपचार

- रोग रोधी किस्म जैंसे आर.सी.आर. 41 की बुवाई करें।
- बीजोपचार अवश्य करें, बुवाई से पूर्व 1 ग्राम थायरम + 1 ग्राम कार्बेण्डाजिम प्रति किलो बीज में उपचारित कर बोये।
- रोगग्रस्त खेत की गर्मी में गहरी जुताई करें।
- रोग प्रकोप की सघनता अधिक हो तो 2–3 वर्षो तक उस खेत में धनियाँ न बोयें।

2. **छाछ्या रोग :** प्रारम्भिक अवस्था में पौधे की पत्तियों व टहनियों पर सफेद चूर्ण नजर आता है। रोग बढ़ने पर सारा पौधा चूर्ण से ढक जाता है। पत्तों का हरापन नष्ट होकर सूख जाता हैं, बीज या तो बनते ही नहीं है अगर बनते है, तो बहुत छोटे रह जाते है।

उपचार

- फसल पर 1.5 किलोग्राम धुलनशील गंधक के 0.3 प्रतिशत घोल या 200 से 275 मिलिलीटर डायनोकेप के 0.5 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। या
- 20–25 किलोग्राम गंधक चूर्ण का भुरकाव प्रति हैक्टेयर करें। आवश्यकतानुसार 15 दिन बाद दोहरायें।
- बेलटॉन 500 ग्राम प्रति हैक्टेयर का 0.1 प्रतिशत घोल का एक छिड़काव रोग नियंत्रण पर समानरूप से प्रभावी है।

3. **झुलसा रोग :** कभी–कभी वर्षा होने पर पत्तियों पर झुलसा रोग हो जाता है। इसके नियंत्रण हेतु मेनकोजेब 1.25–1.50 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर का 0.2 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करें।

4. **लोगिया रोग या तना सूजन रोग :** इस रोग में तने पर छाले जैंसे बन जाते है तथा धनिये का बीज लोंग की तरह लम्बा हो जाता है।

उपचार

- रोगी खेत का बीज बुवाई में प्रयोग न करें।
- जिस खेत में रोग हो उस खेत में 2–3 वर्षो तक धनिये की फसल न लें।
- बीजोपचार करके ही बुवाई करें।
- बीमारी के प्रारम्भिक लक्षण दिखने पर फसल पर बेलेटान एक ग्राम या केलाक्जिन एक मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिडकाव करें, आवश्यकता पड़ने पर पन्द्रह दिन बाद छिड़काव दोहरायें।
- लौंगिया रोग हेतु हैक्साकोनाजोल 5 ई.सी. या प्रोपीकोनाजोल 25 ई.सी. का 2 मिली/किग्रा बीज की दर से बीजोपचार करें एवं खड़ी फसल में हैक्साकोनाजोल 5 ई.सी. या प्रोपीकोनाजोल 25 ई.सी. का 2.0 मिली/लीटर की दर से बुवाई के 45–60 तथा 75 दिन बाद छिड़काव करने पर प्रभावी नियंत्रण पाया गया।

कीट संरक्षण

1. **मोयला :** फूल आते समय या उसके बाद मोयला कीट का प्रकोप होता है। ये कीड़े पौधे के कोमल भागों को चूसते है जिससे फसल पीली पड़ जाती है और उपज पर भारी प्रभाव पड़ता है।

उपचार

इसके नियन्त्रण हेतु फसल पर डाएमिथोएट 30 ई.सी. या मिथाइल डेमेटॉन 25 ई.सी. एक लीटर प्रति हैक्टेयर के हिसाब से पानी में मिलाकर फूल आने के पूर्व छिड़काव करें यह छिड़काव 10 दिन बाद दोहरायें। धनियाँ की फसल में चैंपा नियंत्रण हेतु लेन्टाना खरपतवार की पत्तियों का अर्क 10 प्रतिशत का छिड़काव 10 दिन के अन्तराल से आवश्यकतानुसार करने पर प्रभावी नियंत्रण पाया गया। धनियाँ की फसल में चैंपा नियंत्रण हेतु फूल आने के 30 दिन बाद डाईफन्थूरान 50 डब्ल्यू.पी./1 ग्राम प्रति लीटर या जैव रसायन एजाडीरेक्टीन 10000 पीपीएम/2 एम.एल. प्रति लीटर पानी का छिड़काव नैपसेक स्प्रेयर द्वारा प्रभावी पाया गया। देरी से बोई गई धनिये की फसल को चैंपा (मोयला) कीट के नियंत्रण हेतु वर्टिसिलियम लेकेनी 5 ग्राम प्रति लीटर + एजाडिरेक्टिन 3000 पी.पी.एम. 5 मिली./ली. के तीन छिड़काव करने से अधिक उपज तथा चैंपा ग्रसित छत्रक भी कम पाये गये।

2. **फली छेदक :** फूल बनने से पूर्व मिथाइल पैराथियॉन 2 प्रतिशत चूर्ण तथा बाद में मिलाथियॉन 5 प्रतिशत चूर्ण 25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव करें या एण्डोसल्फॉन 35 ई.सी. या मेलाथियॉन 50 ई.सी. 1.25 लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से समुचित पानी की मात्रा में घोल बनाकर छिड़काव करें।

पाले से बचाव

धनिये की फसल पाले से अधिक प्रभावित होती है अतः इससे बचाव हेतु निम्न उपाय किए जा सकते है।

- पाला पड़ने की संभावना होने पर हल्की सिंचाई करें।
- फसल पर फूल आने शुरू होने के बाद गंधक का अम्ल का 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें एवं 10–15 दिन बाद पुनः दोहरायें।
- रात्रि में खेत के चारों ओर धुआँ करके भी फसल को पाले से बचाया जा सकता है।

कटाई एवं गहाई

धनियां फसल 110 से 125 दिन में पककर तैयार हो जाती है। जब दानों के रंग में कुछ पीलापन आने लगे तब कटाई कर लें। देरी करने से दानों का रंग खराब हो जाता हैं कटाई के बाद पौधों को पूलियों में बांध कर सूखने के लिए छाया में उलटा रख दें। तत्पश्चात् दानों को कूट कर पौधे से अलग कर लें।

भण्डारण

दानो को सुखाने के पश्चात् ही बोरियों में भरे तथा नमी रहित स्थान में भण्डारित करे। ध्यान रहे कि बोरियों में भरते समय दानों में अधिक नमी नहीं रहे अन्यथा दानों के सड़ने की आशंका रहती है।

***

चना उत्पादन की उन्नत तकनीकी

प्रकाश चन्द गुर्जर, आकाश तंवर एवं राजाराम बुनकर
राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर

भारत देश में चने की फसल को प्रमुख रूप से रबी के मौसम में उगाया जाता है। दलहनी फसलो के कुल उत्पादन का लगभग 60 प्रतिशत उत्पादन अकेले चने की फसल से प्राप्त होता है। चनें की हरी पत्तियों का उपयोग ग्रामीण क्षेत्रों में सब्जी के रूप में किया जाता हे। इसकी पत्तियों में खारापन मैलिक अम्ल एवं ऑक्जेलिक अम्ल की उपस्थिति के कारण होता हे। चनें के बीजो का उपयोग दाल के रूप मे किया जाता है तथा इसके साथ–साथ इससे प्राप्त बेसन का उपयोग विभिन्न प्रकार के व्यंजन जैसे कि नमकीन, बेसन के लडडु, बेसन चक्की इत्यादि बनाये जाते है। देश के कुल उत्पादन का लगभग 85 प्रतिशत उत्पादन मध्यप्रदेश, उतरप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा आदि राज्यों में होता है।

मृदा एवं इसकी तैयारी: चनें की फसल से अधिक पैदावार लेने के लिए उचित मृदा का चुनाव करना आव यक होता है। चने की फसल के लिए हल्के ढेले युक्त मिट्टी सही मानी जाती है। इसकी खेती के लिए उचित जल निकास वाली बलुई दोमट मिट्टी उपयुक्त मानी जाती हे जिसका पी.एच. मान 7–7.5 के बीच होता है। खेत की पहली गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करें तथा बाद में दो जुताई देशी हल से करके पाटा लगाकर खेत को समतल कर लेना चाहिए। चने की फसल वायुमण्डलीय नाईट्रोजन का स्थिरीकरण अपनी जड़ो में करके पौघो को नाईट्रोजन उपलब्ध करवाती है।

बीज की मात्रा, बुवाई का समय एवं विधि: चनें की फसल से अधिक उत्पादन लेने के लिए प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए। चने की फसल से प्रति हैक्टेयर अधिक उपज प्राप्त करने के लिए 75–80 किलो प्रति हैक्टेयर बीज काम मे लेना चाहिए। चनें के बीजो को बुवाई से पहले फफुंदनाशी, कीटनाशी, तथा अन्त में राईजोबियम कल्चर से उपचारित कर लेना चाहिए। चनें के बीजो की बुवाई कतारो में करनी चहिए तथा कतार सें कतार की दुरी 30 से.मी. एवे पौधे से पौधे की दुरी 10 से. मी. रखनी चाहिए। बीज की बुवाई का उपयुक्त समय 20 अक्टुबर से शुरू होकर 10 नवम्बर तक होता है। बीज को उखटा रोग से बचाने के लिए थाइरम 2.5 ग्राम अथवा कार्बेण्डाजिम 2 ग्राम या 6 ग्राम ट्राईकोडर्मा प्रति किलो बीज की दर से उपचार करना चाहिए।

उपयुक्त किस्में: देश मे विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयो, कृषि अनुसंधान केन्द्रों से चनें की विभिन्न किस्मों को निकाला गया है जो अधिक उपज देने वाली होती है। इनमें से जी.एन.जी.–1581(गणगौर), विजय, जी.एन. जी.–469(सम्राट), पुसा–256, अवरोधी, आर.एस.जी.–2, दाहोद यलो, प्रताप चना–1, प्रगति, जी. एन. जी.–146, आर. एस. जी. –888(अनुभव) इत्यादि प्रमुख है।

खाद एवं उर्वरक:– चना एक दलहनी फसल होती है अतः इसे ज्यादा खाद एवं उर्वरको की आवश्यकता नही होती है। चनें की फसल की उचित बढवार एवं वृद्धि के लिए 20 किलो नाईट्रोजन, 40 किलो फॉस्फोरस एवं 25 किलो जिप्सम प्रति हैक्टेयर के हिसाब से अन्तिम जुताई के समय मृदा में मिला देना चाहिए।

सिंचाई का प्रबन्धन: चनें की फसल में पानी की आवश्यकता अन्य फसलों की अपेक्षा कम होती है। सिंचाई की उपयुक्त व्यवस्था होने पर दो क्रांतिक अवस्थाओं पर सिंचाई करनी चाहिए। पहली सिंचाई बुवाई के 40 दिन बाद एवं दूसरी सिंचाई फली बनने के समय (60–65 दिन बाद) करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण: हिरणखुरी, मोथा, बथुआ, प्याजी इत्यादि खरपतवार चनें की फसल मे पाये जाते हे जो फसल की बढ़वार एवं उपज पर विपरीत प्रभाव डालते है। इन सभी खरपतवारों की रोकथाम के लिए फसल की निराई–गुड़ाई करना आवश्यक होता है। फसल की निराई–गुड़ाई करने से खरपतवारों की रोकथाम के अलावा मृदा में वायु संचार के साथ–साथ मृदा नमी का संरक्षण भी होता है। खेत की पहली निराई–गुड़ाई बीज की बुवाई के लगभग 25–30 दिन बाद एवं दूसरी निराई–गुड़ाई 55–60 दिन पर करनी चाहिए। खेत में खरपतवार नियंत्रण के लिए रासायनिक खरपतवारनाशी का उपयोग भी किया जा सकता है। इसके तहत बुवाई से पहले 1 ली. पेण्डामिथालिन का उपयोग प्रति हैक्टेयर की दर से 500 लीटर पानी मे मिलाकर छिड़काव कर देना चाहिए तथा बाद में जुताई करके अच्छी प्रकार सें मिट्टी में मिला देना चाहिए।

प्रमुख रोग एवं कीट तथा इनका नियंत्रण: चनें की फसल में विभिन्न प्रकार के प्रमुख रोग एवं कीटो का प्रकोप होता हे जिससे फसल की उपज में भारी गिरावट होती है। इन सभी रोग एवं कीटो का प्रकोप को कम करने के लिए इनकी रोकथाम करना आवश्यक होता है।

फली छेदक कीट: इस कीट की कैटरपिलर अवस्था सबसे हानिकारक होती है। इस कीट की लटें शुरू में चनें की पत्तियों को खाती है तथा बाद में धीरे–धीरे फलियों में छेद करके दानें को खाने लग जाती है। इस कीट की रोकथाम के लिए एन.पी.वी. 250 एल.ई. को 750 मि.ली. प्रति हैक्टेयर के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए तथा इसके बाद फसल की वृद्धि अवस्था पर फुल आने से पहलें एवे फली लगनें के बाद मिथाईल पैराथियान 2 प्रतिशत का 20–25 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव करना चाहिए।

दीमक एवं कटवर्म: कटवर्म का प्रकोप चनें की फसल मे रात के समय अधिक होता हे। यह कीट चनें के पौधे को तनें के पास जमीन के अधार से काट देता है जिससे पौधा सुखकर मर जाता है। इस कीट के नियंत्रण के लिए क्युनालफॉस 1.5 प्रतिशत चुर्ण का 25 किलो प्रति हैक्टेयर के हिसाब से प्रयोग करना चाहिए। फसल में दीमक का प्रकोप अधिक होने पर 2 लीटर क्लोरोपाइरीफॉस 20 ई.सी. का प्रयोग प्रति हैक्टेयर के हिसाब सें सिंचाई के पानी के साथ करना चाहिए।

उखटा रोग: चनें की फसल में लगनें वाला यह प्रमुख रोग है। इस रोग के लक्षणों के अन्दर पत्तियों का पीला पड़ जाना, पौधो का सूख जाना एवं पौधे की बढ़वार कम होना आदि होते है। इस रोग के नियत्रण के लिए फसलों में फसल–चक्र का उपयोग करके, खेत की जुताई गहरी करके, रोगरोधी किस्मों जैसे– अवरोधी, विजय, इत्यादि का उपयोग करके किया जा सकता है।

झुलसा रोग: इस रोग के कारण चनें की उपज में कमी आती है। इस रोग के सर्वप्रथम लक्षण पौधे की पत्तियों, फलियों, तनों आदि पर छोटे–छोटे गोल भुरे रंग के घब्बों के रूप में दिखाई देते है। रोग के नियंत्रण के लिए मेन्कोंजेब 0.2 प्रतिशत या घुलनशील गन्धक 0.2 प्रतिशत धोल का छिड़काव करके किया जा सकता है।

उपज: चनें की फसल में कृषि की उन्नत विधियों का समावेश करके उपज को बढ़ाया जा सकता है। चनें में उन्नत कृषि विधियां अपनाकर लगभग 25–30 क्विंटल दाना उपज के रूप में प्राप्त किया जाता है।

रबी फसलों में सिंचाई एवं उर्वरक प्रबन्धन

हरफूल मीणा, प्रताप सिंह, राजेन्द्र यादव, सत्यनारायण मीणा एवं उदिति धाकड
कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा व कृषि महाविद्यालय,कोटा

भविष्य में अगर किसी प्राकृतिक संसाधन की कमी हो सकती है तो वह है 'जल'। जलवायु परिवर्तनों में बदलाव के कारण लगातार वर्षा की मात्रा में कमी होने लगी है और भूमीगत जल में निरन्तर कमी आंकी जा रही है। बहुत पहले ही जल की महत्वत्ता पर कवि रहीम जी ने कहा है कि "रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून"। पानी गये न ऊबरे, मोती मानुष, चून।। अर्थात बिना पानी सब व्यर्थ है। देश में हरित क्रान्ति में जल एवं उर्वरक प्रबन्धन का अति महत्वपूर्ण योगदान रहा, परन्तु अकुशल जल एवं उर्वरक प्रयोग से फसलों की उत्पादकता में ठहराव सा आ गया है। कहीं पर तो जल की कमी से और कहीं पर जल की अधिकता के कारण फसलोत्पादन की वृद्धि प्रभावित हो रही है, इसके साथ ही उर्वरक उपयोग दक्षता को भी जल प्रबन्धन काफी प्रभावित करता है। रबी फसलों की उपज पर जल एवं उवर्रक प्रबन्धन बहुत अधिक प्रभाव डालते है। अतः हमें समुचित जल एवं उर्वरक प्रबन्धन तकनीकियों को अपनाना होगा तभी पर्याप्त उत्पादन ले सकेंगे। अति महत्वपूर्ण बात यह है कि जल पौधों की सभी क्रियाओं की आधारभूत आवश्यकता है, यदि जल की कमी हो जाती है तो यह सभी क्रियाएँ, जैंसे–पोषक तत्वों का उदग्रहण, भोजन बनाने की प्रक्रिया और अन्ततः उत्पादन प्रभावित होता है। कुशल जल प्रबन्धन भूमि की तैयारी से लेकर फसल कटने तक जारी रहता है। जल प्रबन्धन वहु आयामी विषय है अतः इसे मुख्यतः दो भोगों में विभक्त किया जा सकता है। जैसे–फसलों को जल की उपलब्धता में वृद्धि करना तथा फसलों में जल उपयोग दक्षता बढ़ाना।

फसलों को जल की उपलब्धता में वृद्धि करना : हमारे पास जो जल उपलब्ध है, उसकी उपलब्धता को फसल की बुवाई से कटाई तक सुनिश्चित करना अति आवश्यक है। इसके लिए निम्न तरीकों को अपनाया जा सकता है।

खेत समतलीकरण : जहाँ तक संभव हो खेतों को समतल रखें तथा हल्की सी ढाल देंवे ताकि सिंचाई जल का सम्पूर्ण खेत में एक समान वितरण हो सकें। असमतल खेतों में जहाँ गढढ़े होंगे वहाँ पानी भरा रह जायेगा व फसल पीली पड़ सकती है और ऊँची व ढालू जगह पर फसल सूखने जैसी हो जायेगी।

खेतों में सम्मोच्चरेखीय सीधी मेड़े बनाना : खेतों में पलेवा देते समय उचित दूरी पर समानान्तर मेड़े बना दी जाए तो खेत के प्रत्येक भाग में समान पानी लगेगा। इन मेड़ों को ट्रेक्टर या बैल चालित " बंड फारर्मर " यंत्र से कम समय में आसानी से बनाया जा सकता है। बुवाई के तुरन्त बाद भी इन्हें बनाया जा सकता है, ताकि खड़ी फसल में भी पानी आसानी से लगाया जा सकता है। ज्यादातर किसान इनको नहीं बनाते है और फसल में एक साथ पानी छोड़ देते है, जो ज्यादा फायदेमंद नहीं है। लम्बाई के अनुसार यदि दो समानान्तर मेड़ों के मध्य एकान्तर पर छोटी–छोटी मेड़े और बना दी जाय तो ज्यादा ठीक रहता है। यह तकनीकी नीदरलैंड में काफी लोकप्रिय है।

उपयुक्त सिंचाई विधि अपनाएं : प्रत्येक खेत एक अलग प्रखण्ड होता है। अतः खेतानुसार उपयुक्त सिंचाई विधि का चयन करें। अधिकतर किसान फसलों में परम्परागत तरीके से सीधे ही (बाइल्ड फ्लडिंग) विधि से पानी देते है। इसमें ज्यादा पानी की आवश्यकता होती है, खेत में पानी का असमान वितरण होता है और सिंचाई में भी अधिक समय लगता है। वैंसे तो सिंचाई विधि का चयन मुख्यतया जल की उपलब्ध मात्रा, मिट्टी भूमि ढलान, फसल आदि कारकों के अनुसार करना चाहिए।

जलउपलब्धतानुसार	सिंचाई विधि
पर्याप्त जल उपलब्धता पर	बोर्डर या मेडत्र, पट्टी, क्यारी, कूंड विधि
अपर्याप्त जल होने पर	फब्बारा, बूंद–बूंद (ड्रिप), सूक्ष्म फब्बारा विधि

फसलानुसार		सिंचाई विधि
पास–पास वोई जाने वाली फसलें	गेहूँ, जौ, चारे वाली–बरसीम,रिजका	बोर्डर (मेड़) पद्धति
दूर–दूर पंक्तियों में बोई जाने वाली फसलें	आलू, गन्ना, मक्का, कपास, सूरजमुखी, प्याज, गाजर, मूली, तरबूज	कूंड विधि (फर्रो) विधि
अधिक पानी चाहने वाली फसलें	गेहूँ, वरसीम, रिजका	क्यारी (चेंक बेसिन) विधि
बागवानी /उद्यानिकी फसलें		थाला विधि, ड्रिप विधि

भूमि अनुसार	सिंचाई विधि
हल्की मिट्टी (समतल)	क्यारी
हल्की मिट्टी (असमतल)	फब्बारा, मिनी फब्बारा, ड्रिप (बूंद–बूंद) विधि
भारी मिट्टी (समतल)	स्मतल कूंड, समोच्च कूंड, कोरोगेटेड, बोर्डर
भारी मिट्टी (समतल)	एकान्तर कूंड विधि

फसल चुनाव : अलग–अलग फसलों की जल मांग भी अलग–अलग होती है। अतः जलवायु क्षैत्र, जल उपलब्धता के अनुसार फसलों का चयन करना काफी लाभदायक होता है। नहर के पास के खेतों में अधिक जल मांग वाली फसलें – गेहूँ, गन्ना, आलू व सब्जियों – प्याज, लहसुन, चारे – बरसीम, रिजका तथा

मध्य व दूरस्थ खेतों में कम जल मांग वाली फसलें – सरसों, चना, मसूर, धनियाँ, अलसी, जौ आदि फसलें उगायें।

अधिक उपज देने वाली किस्मों को बोयें : एक ही फसल की विभिन्न किस्मों की पकाव अवधि एवं उसके अनुसार जल मांग भी कम ज्यादा हो सकती है। साथ में यह भी ध्यान रखें कि किस्में कीट एवं बीमारियों से भी प्रतिरोधी हो। रबी फसलों की विभिन्न किस्मों का विवरण तालिका–1 में दिखाया गया है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में अल्पावधि किस्मों का चयन अच्छा रहता है।

खेत की तैयारी : कटाई पश्चात् खरीफ फसलों को ज्यादा समय तक खेत में न रखें, उन्हें खेतों से हटाकर खलियान में रखें तथा खेत की तुरन्त आवश्यक जुताई करें व समयानुसार रबी फसलों की बुवाई करें। जहाँ तक संभव हो, खेतों की जुताई सांयकाल में करें एवं साथ–साथ पाटा भी लगा दें, इससे पानी का वाष्पीकरण कम होगा व नमी संरक्षित रहेगी और यदि संभव हो तो बुवाई भी सांयकाल के समय करें इससे बोये गये बीजो को रात्री में अधिक नमी प्राप्त हो सकेगी व अंकुरण अच्छा होगा।

समय पर बुवाई : रबी की फसलों को समय पर बोना काफी लाभकारी सिद्ध होता है। समय पर बोई गई फसलों का अंकुरण अच्छा होता है तथा कीट एवं बीमारियों का प्रकोप भी नगण्य या बहुत कम होता है। जैंसे संरक्षित नमी पर सरसों/तारामीरा की बुवाई में मोयला, चेंपा (एफिड) का प्रकोप न के बराबर होता है।

तालिका : 1 प्रमुख रबी फसलों का बुवाई समय एवं उन्नत किस्में

फसल	स्थितियाँ	बुवाई समय		किस्म
गेंहूँ	सिंचित	सामयिक बुवाई	नवम्बर के प्रथम से तीसरे सप्ताह तक	लोक–1, जी.डब्ल्यू–190, जी.डब्ल्यू–322, एच.आई.–8381, एच.आई.–8498, राज–4037
		देर से बुवाई	नवम्बर के तीसरे सप्ताह से दिसम्बर के दूसरे सप्ताह तक	लोक–1, जी.डब्ल्यू–173, राज–3765, राज–3777, एच.डी.–2236, राज–4238
	असिंचित	सामयिक बुवाई	अक्टूबर के अन्त से मध्य अक्टूबर तक	डी.–134, सुजाता, मुक्ता, एच.डब्ल्यू–2004, एच.डी.–4672, ए–9–31–1
	लवणीय एवं क्षारीय मृदाऐं	सामयिक बुवाई	अक्टूबर के मध्य से मध्य नवम्बर तक	राज–3077
जौ	सिंचित	सामान्य बुवाई	मध्य अक्टूबर से नवम्बर तक	आर.डी.बी.–1, आर.डी. 103, आर.डी. 57
		देरी से बुवाई	मध्य दिसम्बर तक	आर.एस. 6, आर.डी. 103
	असिंचित	सामान्य	मध्य अक्टूबर से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक	आर.डी. 31
	लवणीय क्षैत्र	सामान्य	मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक	बी एल 2 (बिलाडा–2)
	मौल्याग्रस्त क्षैत्र	सामान्य	मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक	आर.डी. 387
सरसों	सिंचित	सामान्य	दस से पच्चीस अक्टूबर तक	पी.आर–15, आर.एच–30, पी.आर–45, पूसा बोल्ड, पूसा जय किसान (बायो 902), माया, वसुन्धरा, अरावली
		देरी से बुवाई	मध्य नवम्बर तक	स्वर्ण ज्योति
	असिंचित	सामान्य	मध्य सितम्बर से मध्य अक्टूबर तक	पी.आर–15, आर.एच–30, वरूणा
चना	सिंचित	सामान्य देरी	20 अक्टूबर तक नवम्बर	सी 235, दोयद यलो, बी.जी. 256, फूले जी–5, जी एन जी – 149 (काबूली)
	असिंचित	सामान्य	अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक	सी 235, एच 208, बीजी 256, फूले जी–5
तारामीरा	बारानी	सामान्य	मध्य सितम्बर से मध्य अक्टूबर तक	टी 27, आई.टी.एस.ए, आर.टी एम – 314
अलसी	असिंचित	सामान्य	दस अक्टूबर तक	चम्बल, टी 397, त्रिवेणी, किरण
	सिंचित	सामान्य	नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक	टी 397, त्रिवेणी, किरण, जवाहर, मीरा, एल.एम.एच–62
धनियां		सामान्य	मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक	यू.डी.–20, सी.एस.–6, आर.सी.आर–41, आर.सी.आर–436
मसूर		सामान्य	मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक	टी 36, सिहोर 74–7
मटर		सामान्य	10–25 अक्टूबर तक	टी 163, आर.पी.जी.–3, रचना, आजाद पीन, अरकेल, डी.एम.आर

संतुलित व समन्वित पोषक तत्वों का प्रयोग – अनुसंसित मात्रा में खाद उर्वरक एवं उर्वरकों का प्रकोग करना ज्यादा अच्छा रहता है। संतुलित व समन्वित उर्वरक प्रयोग से पौधों द्वारा जल उपयोग क्षमता में वृद्धि के साथ उपज में भी वृद्धि होती है। ज्यादातर कृषक नत्रजन व फास्फोरस (डी.ए.पी.) का प्रयोग करते है। इनके साथ यदि पोटाश भी अनुसंसित मात्रा में प्रयोग की जाए तो यह पानी की उपयोग क्षमता बढाता है। यदि संभव हो सके तो कम से कम तीन साल में एक बार जैविक खादों – गोबर की खाद, कम्पोस्ट या वर्मीकम्पोस्ट का प्रयोग अवश्य करें। इनसे भूमि की उर्वरता एवं जल धारण क्षमता में वृद्धि होगी। खड़ी फसल में नत्रजन (यूरिया 0.1 प्रतिशत) का पर्णीय छिड़काव विशेषतः शुष्क क्षेत्रों में लाभकारी रहता है।

तालिका : 2 विभिन्न फसलों में सिफारीश की गई संतुलित उर्वरक मात्रा (बुवाई पूर्व कोई एक मिश्रण, किग्रा/हैक्टर)

फसल	क्षेत्र	नत्रजन : फास्फेट : पोटाश	डीएपी + यूरिया + एमओपी	एनपीके + यूरिया + एमओपी	सिंगल सुपर फास्फेट + यूरिया + एमओपी	खडी फसल में यूरिया (किग्रा)
गेंहूँ	सिंचित	120:40:30	90+95+50	125+100+15	125+130+50	130
	असिंचित	30:15	33+50+0	50+50	95+65	
जौ	सिंचित	60:20	45+48	63+48	125+65	65
	असिंचित	30:15	33+50	50+50	95+64	
चना	सिंचित	20:40	90+13	125+10	250+45	
	असिंचित	10:25	55+	78+	156+22	
सरसों	सिंचित	80:40	90+50	125+55	250+90	90
	असिंचित	40:20	45+25	62+77	125+45	
धनियां	सिंचित	50:30:20	65+27+33	95+30+8	187+55+33	55
	असिंचित	25:15:10	35+17+33	45+20+8	94+25+17	
मसूर	सिंचित	20:40	90+13	125+10	250+45	
	असिंचित	10:25	55+	78+	156+22	
अलसी	सिंचित	30:15	33+50	50+50	95+65	
	असिंचित	90:30:30	100+100+50	150+100+15	186+140+50	
मटर	सिंचित	20:40	90+13	125+10	250+45	
	असिंचित	10:20	55+	78+	156+22	

सूक्ष्म तत्वों का प्रयोग : बुवाई से पूर्व अपने खेतों की मिट्टी का परीक्षण अवश्य करायें इससे यह पता चल जायेगा कि कौनसे सूक्ष्म तत्व की कमी है और उसकी कमी को शीघ्र दूर करें। जैसे कि तिलहन, दलहन एवं मसाला फसलों में गन्धक (सल्फर) का प्रयोग लाभकारी होता है। धान–गेहँ, सोयाबीन–गेहँ, फसल चक्रों में जिंक की कमी देखी जाती है। अतः 25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर जिंक सल्फेट बुवाई के समय या पूर्व भूमि में मिलावें। यदि खड़ी फसल में या शुष्क क्षेत्रों में सूक्ष्म तत्वों की कमी हो तो सूक्ष्म तत्वों के पर्णीय छिड़काव ज्यादा लाभप्रद होता है।

खरपतवारों को समय पर नियंत्रण करें : खरपतवार प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष तरीके से फसलों को सबसे ज्यादा नुकसान पहँचाते है। ये

भूमि में उपलब्ध जल एवं पोशक तत्वों का उदग्रहण करके उन्हें फसलों को उपलब्ध नहीं होने देते हे। अतः समय–समय पर यथासंभव परिस्थितिनुसार समुचित तरीकों से इनका नियंत्रण अवश्य करें। जहाँ तक संभव हो, हमेशा सिंचाई से पूर्व खरपतवारों को निकाल दें ताकि ये कम से कम पानी का वाष्पोत्सर्जन कर पायें। खेत में टिल्थ या बाह आने पर भी इनको निकाल दें जिससे भूमि की नमी का कम से कम ह्रास होगा।

खरपतवारों की पलवार (मल्चिंग) द्वारा नमी संरक्षण : यदि समय पर श्रमिक उपलब्ध हो जाए तो निराई–गुडाई द्वारा खरपतवारों का नियंत्रण करें। निराई–गुडाई द्वारा भूमि से पानी उड़ने की क्रिया धीमी हो जाती है, क्योंकि ऊपरी परत टूटने से कैपीलरी क्रिया काफी कम हो जाती है। निराई–गुडाई द्वारा निकाले गये खरपतवारों में यदि फूल नहीं बने हो तो उनहें खेत के बाहर नहीं फेके वरन् फसल की दो लाइनों के मध्य इस प्रकार बिछा दे कि उनकी जड़ें जमीन को हुए नहीं यानि पत्तियों पर जड भाग रखें। इस प्रकार ये खरपतवार सूखकर एक अवरोध का कार्य करेंगे और भूमि में नमी संरक्षण में सहायक होगे। बाद में ये सड़कर भूमि में जीवांश पदार्थ की मात्रा बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध होंगे। विशेषतः यह क्रिया शुष्क क्षेत्रों में काफी लाभदायक होती है।

कीट एवं बीमारियों की रोकथाम : अन्य शस्य क्रियाओं से ज्यादा लाभ प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि फसलें स्वस्थ एवं निरोगी हो क्योंकि स्वस्थ पौधे ही उपलब्ध जल एवं पोषक तत्वों का दक्षतापूर्ण उपयोग कर सकते है। यदि फसल में कीट व रोगों का प्रकोप हो जाए तो सब बेकार हो जाता है और काफी कम उपज प्राप्त होती है। अतः समय पर कीट एवं रोग नियंत्रण की अनुसंशित विधियों को अपनाएँ विशेषकर बीजोपचार अवश्य करें।

वैज्ञानिक सिंचाई पद्धति अपनाएँ : वैज्ञानिक सिंचाई पद्धति में फसल की जल मांग के अनुरूप उचित समय (क्रान्तिक अवस्थाओं) पर जल की समुचित मात्रा उचित विधि से सिंचाई करनी होती है। सिंचाई में फसल की मांग अनुसार पानी देंवे। यदि अधिक मात्रा में पानी देंगे तो पानी पौधों के जड़ीय क्षेत्र के नीचे रिस कर व्यर्थ चला जायेगा और कई बार अधिक जल प्लावन से फसल पीली भी पड जाती है, उसकी बढ़वार रूक जाती है एवं अन्ततः उपज में कमी होती है। जब क्यारी, पट्टी कूंड या बोर्डर में लगभग 80 प्रतिशत तक पानी चला जाय तो उसमें पानी देना बंद कर दे क्योंकि शेष भाग पानी के रिसाव द्वारा स्वतः ही सिंचित हो जायेगा। ज्यादातर कृषक क्यारी में पूरा पानी भरने पर ही सिंचाई बंद करते है, इससे लगभग 20 प्रतिशत पानी अधिक लगता है। यदि इस प्रकार " कट ऑफ " विधि से सिंचाई दे तो लगभग 20 प्रतिशत पानी की बचत आसानी से हो सकती है और उससे अतिरिक्त श्रेत्र की सिंचाई की जा सकती हे। फसलों की जल मांग के अनुसार क्रान्तिक अवस्थाओं पर सिंचाई करें, जिससे दिये गये जल का सर्वाधिक उपयोग हो सकें।

सहभागिता सिंचाई प्रबन्धन अपनाएँ : पानी पर सभी का समान अधिकार है। अतः इसका समान वितरण व उपयोग होना चाहिए। ज्यादातर नहर के ऊपरी भाग (हेड) के किसान ज्यादा पानी लगाते है एवं अंतिम छोर (टेल) के किसानों को पानी उपलब्ध नहीं हो पाता है। इसके लिए हमें सहभागी सिंचाई (बाराबंदी) प्रणाली अपनानी होगी। जल उपयोग समितियों को ज्यादा सुदृढ़ एवं उनकी क्रियाशीलता बढ़ाकर सहयोग करना होगा अन्यथा काफी परेशानियाँ होने लगेगी। जल प्रशासन को भी समय रहते नहरों का रखरखाव एवं पानी उपलब्धता का ध्यान रखना होगा। कृषकों को अनुशासित सिंचाई प्रणाली यानि मांग के अनुरूप क्रान्तिक अवस्थाओं पर ही सिंचाई करनी होगी तभी सभी की खुशहाली होगी। जल प्रबन्धन में वैज्ञानिक तरीकों को व्यवहार में लाना पड़ेगा तभी हम फसलोत्पादन को सतत् बनाए रखने में सफल हो पाऐगे। अतः प्रत्येक कृषक को अपने खेत में प्रति बूंद जल से अधिक उत्पादकता लेनी होगी और यह जल प्रबन्धन तकनीकी को अपनाकर किया जा सकता है।

अलसी की उन्नत खेती

मोनिका मीणा, सत्यनारायण रेगर एवं दीपक मीना
कृषि महाविद्यालय, कोटा एवं राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर

अलसी तिलहनी महत्वपूर्ण फसल हैं। अलसी का संपूर्ण पौधा किसान के लिए आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण साबित हो सकता है। यह कई तरह से महत्वपूर्ण व उपयोगी है। इसके तने से लीनेन नामक बहुमूल्य रेसा प्राप्त होता है और बीज का उपयोग तेल प्राप्त करने के साथ–साथ औषधीय रूप में उपयोग किया जाता है। आयुर्वेद में इसे दैनिक भोजन माना जाता है। अलसी का जीवन में कई तरह से उपयोग किया जाता है। इसके कुल उत्पादन का लगभग 20 प्रतिशत खाद्य तेल के रूप में तथा शेष 80 प्रतिशत उद्योगों में उपयोग होता है। जैसे कि सूखा तेल, पेंट बनाने में, बार्निश, लेमिनेशन तेल, कपड़े, चमड़े, छपाई की स्याही, चिपकाने, साबुन आदि में किया जाता है।

अलसी के बीज में ओमेगा 3 वसीय अम्ल 50 से 60 प्रतिशत पाया जाता है। साथ ही इसमें अल्फा लिनोनिक अम्ल, प्रोटीन खाद्य रेसा आदि पाया जाता है। ओमेगा 3 वसीय अम्ल मधुमेय व गठिया, मोटापा, उच्च रक्त चाप, कैंसर, मानसिक तनाव, दमा आदि बीमारियों में लाभ दायक होता है।

भूमि और जलवायु
फसल के लिए काली, भूरी व दोमट भूमि उपयोगी होती हैं। भूमि में उचित जल निकासी का प्रबंध हो, ठंडी व शुष्क जलवायु की आवश्यकता पड़ती है। अलसी के उचित अंकुरण हेतु 25 से 30 सेल्सियस तापमान तथा बीज बनते समय तापमान 15 से 20 सेल्सियस होना चाहिए। परिपक्वन अवस्था पर उच्च तापमान कम नमी तथा शुष्क वातावरण की आवश्यकता होती है।

खेत की तैयारी
अलसी का अच्छा अंकुरण प्राप्त करने के लिए खेत भुरभुरा खरपतवार रहित होना चाहिए। खेत को दो से तीन बार हेरो चलाकर पाटा चलाना आवश्यक है। जिससे नमी संरक्षित रह सके, अलसी का दाना छोटा होता है, इसलिए अच्छे अंकुरण हेतु खेत का भुर भरा होना अतिआवश्यक है।

बुआई का समय
असिंचित क्षेत्रों में अक्टूंबर के प्रथम पखवाड़े में तथा सिंचित क्षेत्रों में नवंबर के प्रथम पखवाड़े में बुआई कर लेनी चाहिए। उपयुक्त समय पर बुआई करने से अलसी की फसल में होने वाले कीट व रोगों से बचाया जा सकता है।

बीज एवं बीजोपचार
अलसी की बुआई 20 से 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से करनी चाहिए। कतार से कतार की बीच की दूरी 30 से.मी. तथा पौधे की दूरी 5 से 7 से.मी. रखनी चाहिए। बीज को भूमि के अंदर 2 से 3 सेंटिमीटर की गहराई में बुआई करना उचित रहेगा। बुआई से पूर्व बीजोपचार किया जाना चाहिए। अलसी को कार्बेडाजिम 2.5 से 3 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर बुआई करनी चाहिए।

उर्वरकों की मात्रा
असिंचित क्षेत्र के लिए अच्छी उपज प्राप्ति हेतु नाइट्रोजन 50 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 40 कि.ग्रा. एवं 40 कि.ग्रा. पोटास की दर से तथा सिंचित क्षेत्रों में 100कि.ग्रा. नाइट्रोजन 75 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग करें। इसमें नाइट्रोजन की आधी मात्रा व फॉस्फोरस की पूरी मात्रा बुआई के समय सिड्रिल (चोगे) द्वारा जमीन में 2 से 3 से.मी. की गहराई में उराई की जानी चाहिये। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा टोप ड्रेसिंग के रूप में प्रथम सिंचाई के बाद करें, फॉस्फोरस के लिए सुपर फॉस्फेट का प्रयोग करें। अलसी में एजोटो बेक्टर एवं फॉस्फोरस घोलक जीवाणु आदि जेव उर्वरक के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

खरपतवार प्रबंधन : बुआई के 20 से 25 दिन बाद पहली निराई गुड़ाई एवं 40 से 45 दिन बाद दूसरी निराई गुड़ाई करनी चाहिए। अलसी की फसल में रसायनिक विधि से खरपतवार प्रबंधन हेतु अंकुरण पूर्व पेन्डामिथेलीन 30 ई.सी. 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व को 500 से 600 लीटर पानी में मिलाकर खेत में छिड़काव करें।

जल प्रबंधन : अलसी के अच्छे उत्पादन के लिए 2 से 3 बार सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। प्रथम सिंचाई 4 से 6 पत्ती निकलने पर, दूसरी सिंचाई शाखा फूटते समय, तीसरी सिंचाई फूल आते समय तथा चौथी दाना बनते समय करनी चाहिए। सिंचाई के साथ–साथ जल निकास का भी उचित प्रबंध होना चाहिए।

अलसी के प्रमुख कीट
अलसी में कीट लगने पर आर्थिक उत्पादन गिर जाता है। अलसी में विभिन्न प्रकार के कीटों का आक्रमण होता है। जैसे– कर्तन कीट, काली मक्खी, लीप माइनर, फल भेदक कीट, बिहारी बालदार सुंडी आदि। इनसे बचाव के लिए सही समय पर बुआई करनी चाहिए। फसल के साथ उगी हुई खरपतवार को जल्दी से नश्ट कर देना चाहिए। जिससे कीट उन पर नहीं बैठ सकें। रसायनिक कीट प्रबंधन–सबसे आखिर में प्रयोग किया जाता है जैसे कि इमिडाक्लोप्रिड, क्लोरोपायरीफॉस और क्विनोलफॉस का प्रयोग कर सकते हैं।

अलसी में लगने वाले रोग
अलसी में लगने वाले रोग व उनसे बचाव करके अच्छी फसल ली जा सकती है। अलसी में लगने वाला रोग, अलसी के पूरे पौधे को बीमार कर देता है। रोग के कारण फसल के उत्पादन में कमी आ जाती है। इसे समय पर नियंत्रित नहीं किया जाए तो ये रोग पूरी फसल का नष्ट कर सकते हैं। अलसी में लगने वाले रोग जैसे–गेरुआ रस्ट, उक्टा, विल्ट, अल्टरनेरिया और पाउडरी मिल्डयू प्रमुख है। इन रोगों से बचाव के लिए सावधानी रखनी चाहिए। अगर पौधों में रोग लग ही जाए तो ऐसे पौधों को जड़ से उखाड़कर खेत से बाहर फैंक दें या जला देना चाहिए। दूसरी बात जो महत्वपूर्ण है वह है–रोग रोधी अलसी की किस्मों की बुवाई की जा सकती। रसायनिक प्रबंधन में मेंकोजेब और कार्बेडिंजिम का छिड़काव करना चाहिए। इस तरह प्रबंध करके किसान भाई अलसी की अच्छी फसल ले सकते हैं।

औषधीय गुणों से भरपुर इसबगोल

अंजू बिजारणियाँ, रोशन कुमावत एवं रमेश चौधरी
कृषि महाविद्यालय, उम्मेदगंज, कोटा एवं स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

औषधीय पादपों का मानव जीवन में प्राचीनकाल से ही बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारत में औषधीय पदपों का उपयोग रोगों के उपचार करने में किया जाता रहा है। भौगोलिक व वानस्पतिक विविधताओं के कारण भारत औषधीय पादप संपदाओं में धनी है। इसबगोल भारत में औषधीय व आर्थिक दृष्टिकोण से प्रमुख रबी फसल है। देश में इसे सामान्यतया इसबगोल के नाम से जाना जाता है। इसका वानस्पतिक नाम *प्लान्टेगो ओवेटा है, जो प्लान्टेजिनेसि* कुल में आता है। 'प्लान्टेगो ओवेटा' शब्द परशियन भाषा में लिया गया है। शाब्दिक अर्थ 'होर्स प्लावर' होता है। भारत का इसबगोल के उत्पादन व निर्यात में विश्व में प्रथम स्थान है। कुल उत्पादन का 80 प्रतिशत यूरोपियन देशों को निर्यात कर लगभग 60 मिलियन रूपये हर वर्ष विदेशी मुद्रा अर्जित कर यह कृषि अर्थव्यवस्था सुदृढ़ बनाता है।

महत्व एवं उपयोग : इसबगोल की फसल आर्थिक एवं औषधीय गुणों से भरपूर होने के साथ ही निर्यात की दृष्टि से भी देश की कृषि अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। औषधीय गुणों के कारण प्राचीन काल से ही इसका उपयोग भारतीय चिकित्सा पद्धति में होता आ रहा है। यह फसल वातावरण की विपरीत परिस्थितियों व कम उपजाऊ भूमि में भी आसानी से उगाई जा सकती है। कम लागत के साथ उन्नत किस्मों को लगातार इस फसल से अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती है। वर्तमान समय के बदलते सामाजिक रहन–सहन, आहार एवं वातावरण में विभिन्न प्रकार के जटिल रोग होने के कारण औषधीय पौधों की मांग बढ़ती जा रही है। इसके उपयोग से कई रोगों का उपचार किया जा सकता है। इसबगोल का उपयोग बहुत ही जटिल स्वास्थ्य संबंधित समस्याओं के लिए किया जाता है। इसमें कब्ज मुख्य है। इसके अलावा डायरिया, आंव, दस्त, मोटापा, हृदय विकार, खून में कोलेस्ट्रॉल को कम करना, पाचन तंत्र सुधार आदि के लिए प्रमुखता से इसका उपयोग किया जाता है।

प्रमुख क्षेत्र एवं उत्पादन

भारत, विश्व का सर्वाधिक इसबगोल उत्पादक व एकमात्र निर्यातक देश है। राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र इसबगोल उत्पादन करने वाले प्रमुख राज्य है। उत्पादन का लगभग 80 प्रतिशत भाग विदेशों में निर्यात किया जाता है। यूरोपियन देशों में यूएसए प्रमुख निर्यातक देश है।

जलवायु व भूमि

पश्चिमी भारत में रबी के मौसम में इसकी बुआई का उत्तम समय अक्टूबर से नवंबर तक होता है। यह फसल कम पानी में अच्छी पैदावार देती है, इसलिए शुष्क प्रदेश के लिए बहुत कारगर एवं किफायती है। इसबगोल की फसल को हल्की दोमट से लेकर रेतीली मृदा में उगाया जा सकता है। इसबगोल के बीजों की भूसी में एक चिपचिपा पदार्थ म्यूसीलेज पाया जाता है, जो कि फाइबर से भरपूर होता है। पानी में डूबने से यह स्वादहीन व गंधहीन जेल बनाता है। इसके रोचक गुण के कारण यह कब्ज, अपच को ठीक कर पाचनतंत्र को मजबूत बनाता है। इसबगोल के बीज की भूसी पानी की नमी के प्रति बहुत सहिष्णु होती है। इसलिए बेमौसम वर्षा व अधिक ओस फसल के पकने के समय हानिकारक होते है।

भूमि की तैयारी

इसबगोल के बीज का अंकुरण भुरभुरी मृदा में उपयुक्त होता है। इसके लिए खेत की अच्छी तरह से जुताई कर पाटा चलाने से खेत तैयार हो जाता है। खेत पूर्ण रूप से समतल व उसमें उचित जल निकास का प्रबंध होना चाहिए, क्योंकि पानी भरा रहने से रोगो का प्रकोप बढ़ जाता है।

बीज व बुआई का समय

इसबगोल की फसल के लिए 4–4.5 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर उपयुक्त रहता है। बुआई के लिए अक्टूबर का समय सबसे उपयुक्त होता है। इसके बाद बुआई तथा सघन फसल होने से मृदु आसिता रोग तथा एफिड (चैंपा) का प्रकोप बढ़ जाता है। ये दोनों ही फसल को आर्थिक एवं गुणात्मक दृष्टि से भारी नुकसान पहुंचाते है।

बुआई की विधि

सामान्यतया इसबगोल की बुआई बीज छिड़काव विधि से ही की जाती है। हालांकि पंक्ति में 30 से.मी. दूरी पर बुआई करने से, सस्य क्रियाऐ जैसे, निराई–गुड़ाई से खरपतवार नियंत्रण कटाई आदि करने में असानी रहती है। इसबगोल के बीज छोटे होने के कारण इन्हें बालू में मिलाकर छिड़काव या पंक्तियों में बुआई करना आसान होता है। बीज की गहराई 1–2 सें. मी. से ज्यादा नहीं होनी चाहिए। इससे अधिक गहराई पर डालने से अंकुरण में कमी रह जाती है।

किस्में

इसबगोल की उन्नत किस्मों से इसका उत्पादन अच्छा मिलता है। इसकी व्यावसायिक खेती के लिए निम्न किस्मों की अनुसंशा की जाती है। इनमें प्रमुखतः–बल्लभ इसबगोल–1, निहारिका, गुजरात इसबगोल–2, गुजरात इसबगोल–4, जवाहर इसबगोल–4 आदि उन्नत किस्में है।

फसल कटाई व उत्पादन

इसबगोल की फसल 90–120 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। फसल के पकने के समय इसकी पत्तियों का रंग पीलापन लिए तथा स्पाईक भूरापन लिए होता है। फसल की कटाई पूर्णतया शुष्क व साफ वातावरण को ध्यान में रखकर पौधों के सूख जाने के बाद करते है। फसल का औसत उत्पादन 10–15 क्विंटल होता है। उत्पादन में विविधता फसल की किस्म, जलवायु व भौगोलिक विभिन्नताओं से भी प्रभाव पड़ता है।

प्रसंस्करण

इसबगोल के बीज के हस्क (भूसी) का प्रसंस्करण इसबगोल डी–हस्कर विल्स से किया जाता है। इसमें ग्राइंडिंग दबाव से हस्क बीज से अलग हो जाता है। पंखों व जालियों के माध्यम से छानकर यह शुद्ध मात्रा में प्राप्त किया जाता है। इसबगोल के कुल बीज के वजन का लगभग 25 प्रतिशत भार हस्क प्राप्त किया जाता है।

प्रमुख रोग एवं कीट प्रबंधन

इसबगोल की खेती कम उर्वराशक्ति वाली भूमि और शुष्क व कम सिंचाई वाले क्षेत्र में भी सफलतापूर्वक की जा रही है। फसल में उत्पादकता की कमी के अनेक कारणों में से रोग व कीटों का भी प्रमुख स्थान है। रोगों के कारण फसल उत्पादन में 30 से 50 प्रतिशत तक कमी आ जाती है।

मृदु आसिता

मृदु आसिता को सामान्यतः डाउनी मिल्ड्यू के नाम से जाना जाता है। यह *पेरेनोस्पोरा प्लांटेजीनीस* नामक कवक से होता है। यह फसल के लिए सर्वाधिक नुकसानदेह होता है। कई बार इससे फसल पूर्णतया भी नष्ट हो जाती है। अधिक सघन फसल, अधिक बीज मात्रा, बार–बार सिंचाई व नमी का रहना तथा अधिक मात्रा में नाइट्रोजनयुक्त उर्वरकों का उपयोग इस रोग को बढ़ाने में सहायक है। इस रोग के प्रभावी नियंत्रण के लिए 3 ग्राम मेटालेक्सील (रिडोमिल एमजेड) प्रति कि.ग्रा. बीज में डालकर बीजोपचार करना चाहिए। रोग के लक्षण दिखाई देने पर 15 दिनों के अंतराल पर 0.025 प्रतिशत घोल के तीन बार छिड़काव करना चाहिए। नाइट्रोजन व पौष्टिक उर्वरक से भी इस रोग में कमी होती है।

उकठा रोग

यह रोग फ्यूजेरियम नामक कवक के कारण होता है। यह कवक पौधों के जड़ तंत्र को नष्ट कर देता है, जिससे पानी व खाद्य पदार्थों का संचार रूकने के कारण पौधे सूख जाते हैं। इस रोग के प्रबंधन के लिए ट्राइकोडर्मा का 2 कि.ग्रा. पाउडर, 10 कि.ग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर प्रति हैक्टर डालने की संस्तुति की जाती है। साथ ही रोग ग्रसित खेत में फसल चक्र भी अपनाया जा सकता है।

एफिड

एफिड (एपिसगास्पिपी) इसबगोल का महत्वपूर्णनाशी कीट है। इसका प्रकोप फसल की बुआई के 60–70 दिनों बाद फूलों की अवस्था पर होता है। इसके प्रभावी नियंत्रण के लिए एसीफेट 75 एस.पी. का 700 ग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

तालिका 1 : इसबगोल फसल का मृदु आसिता रोग प्रबंधन क्षेत्र प्रदर्शन में

क्र.सं.	उपचार	रोग उग्रता			
		7 डीएआई	14 डीएआई	21 डीएआई	पीडीआई
1	एफवाईएम + ट्राइकोडर्मा	1	3	5	15.2
2	एफवाईएम + अरंडी खली+ट्राईकोडर्मा	1	2	3	13.4
3	एफवाईएम + नीम खली + ट्राईकोडर्मा	1	3	4	12.3
4	अरंडी खली + ट्राईकोडर्मा	1	3	4	13.5
5	नीम खली + ट्राईकोडर्मा	1	4	5	14.2
6	एफवाईएम + नीम खली + अरंडी खली + ट्राईकोडर्मा	1	2	3	9.6
7	ट्राईकोडर्मा	2	4	5	16.2
8	रिडोमिल एमजेड	0	1	1	4.8
9	नियंत्रण	3	5	8	21.2

रबी फसलों में खरपतवार नियन्त्रण करके अधिक उत्पादन लें

शंकर लाल यादव, बलदेव राम, गणेश नारायण यादव, खजान सिंह, राजेन्द्र कुमार यादव, प्रताप सिंह, रणवीर यादव एवं डी. एल. यादव
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा, श्रीकर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर एवं कृषि अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

खरपतवार की समस्या मनुष्य ने जब से कृषि कार्य प्रारम्भ किया तभी से चली आ रही है। प्रारम्भ में मनुष्य ने अपने चारों ओर उगे कुछ उपयोगी पौधों को अपनी खाद्य समस्या हल करने के लिए उगाना शुरु किया। अनुभव से देखा गया कि बोई गई फसल के अतिरिक्त कुछ बिना बोये गये अनचाहे पौधे उग आते हैं जो फसल की वृद्धि को रोककर अधिकतम पैदावार लेने में बाधक होते हैं जिन्हें खरपतवार कहते हैं। हमारे देश की बढ़ती हुई जनसंख्या और उनकी खाद्यान्न पूर्ति की समस्या का समाधान प्रति इकाई क्षेत्र, समय व साधन के समुचित एवं विवेकशील प्रयोग से अधिक से अधिक उत्पादन लेने में ही संभव है। गुणवत्तापूर्ण फसलोत्पादन में खरपतवार मुख्य रुप से बाधक होते हैं जो कीट एवं बीमारियों की अपेक्षा फसल को अधिक नुकसान पहुँचाते हैं। फसलों में खरपतवार जहां फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करके उपज में 10–100 प्रतिशत तक की भारी कमी कर देते हैं वहीं किसानों को आर्थिक नुकसान भी पहुंचाते हैं। इसलिए फसलों का भरपूर उत्पादन प्राप्त करने के लिए सामयिक एवं प्रभावी खरपतवार प्रबंधन किया जाना नितान्त आवश्यक है।

रबी फसलों के प्रमुख खरपतवार

1. **चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार :** जैसे– बथुआ, खरबथुआ, हिरणखुरी, कृष्णनील, सैंजी, सतगठिया, दूधी, सत्यानाशी, प्याजी, कंटेली, जंगली गोभी, गोखरू, धतूरा, लटजीरा, गाजर घास।
2. **घास कुल के खरपतवार :** जैसे– दूब, कोंदा, चिरचिड़ा, जंगली जई, गुल्ली ड़न्ड़ा, कांस।
3. **मोथा कुल के खरपतवार :** जैसे मोथा की विभिन्न प्रजातियां इत्यादि।

खरपतवारों से हानिकारक प्रभाव

खरपतवार फसल के साथ प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रतिस्पर्धा करके उपज में हानि पहुंचाते है। विशेषकर प्रत्यक्ष रूप से पाँच प्रकार जैसे उपलब्ध पोषक तत्वों का ह्रास, प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा, जल के लिए प्रतिस्पर्धा, जगह के लिए प्रतिस्पर्धा एवं कीटों एवं रोगों के जीवाणुओं को आश्रय प्रदान करके नुकसान पहुचांते है।

तालिका1 : फसल – खरपतवार में प्रतिस्पर्धा की क्रान्तिक अवस्था

फसल	क्रान्तिक समय (बुआई के बाद दिन)
गेहूँ	30-45
जौ	15-45
रबी मक्का	30-45
चना	30-60
मटर	30-45
मसूर	30-60
सरसों	15-40
सूरजमुखी	30-45
कुसुम	15-45
अलसी	20-45
रामतिल	15-45
गन्ना	30-120
आलू	20-40
गाजर	15-20
प्याज, लहसुन	30-75
टमाटर, मिर्च	30-45
बैंगन	20-60
गोभी	30-45
भिन्डी	15-30

खरपतवार नियंत्रण की विधियां

खरपतवारों की रोकथाम में ध्यान देने योग्य बात यह है कि खरपतवारों का सही समय पर नियंत्रण किया जाये। खरपतवारों की रोकथाम निम्नलिखित विधियों से की जा सकती है। जैसे– निरोधक विधियां, कृषिगत विधियां, यांत्रिक विधियां एवं रासायनिक विधियां इत्यादि।

(क) निरोधक विधियां : इस विधि में वे क्रियायें शामिल की गई है जिनके द्वारा खेत में खरपतवारों को फैलने से रोका जा सकता है, जो इस प्रकार है।

1. साफ तथा खरपतवार रहित बीजों का ही उपयोग किया जावे।
2. गोबर की खाद या कम्पोस्ट को अच्छी तरह से सड़ा कर ही प्रयोग करें, जिससे उनमें व्यापत खरपतवारों के बीजों की अंकुरण क्षमता समाप्त हो जाये।
3. प्रक्षेत्र मशीनों, कृषि यंत्रों का प्रयोग आवश्यक साफ–सफाई के बाद ही करना चाहिये।
4. रोपाई वाली फसलों की पौधशाला में ही खरपतवारों को उखाड़कर बाहर कर देना चाहिये।
5. खाली पडत भूमि, सिंचाई नालियों, नहरों, मेड़ों तथा सडकों पर खरपतवार न उगने देंवें।
6. बीज बनने से पहले खरपतवारों को अवश्य नष्ट कर देवें।

(ख) यांत्रिक विधियां : यह विधि खरपतवारों की रोकथाम की सबसे पुरानी प्रचलित, सरल व प्रभावी विधि है। इस विधि में खरपतवारों की रोकथाम हेतु विभिन्न यंत्रों व मशीनों का प्रयोग किया जाता है। यांत्रिक

विधि के अन्तर्गत निम्न क्रियाऐं अपनायी जाती है।

1. **भू परिष्करण :** भू परिष्करण में वे सभी कर्षण क्रियाऐं शामिल होती हैं जो कि फसल के विकास व वृद्धि के लिये आवश्यक है। खेतों की समय–समय पर कर्षण कार्य जैसे जुताई एवं गुडाई करने से खरपतवार उखडकर या टूटकर नष्ट हो जाते हैं। इस विधि के द्वारा वार्षिक तथा बहुवर्षीय खरपतवारों को नष्ट किया जा सकता है।

2. **हाथ द्वारा निराई–गुडाई :** यह खरपतवार नियंत्रण की सर्वोत्तम विधि है। फसलों की प्रारंभिक अवस्था बुवाई के 15–35 दिन के मध्य का समय खरपतवारों से प्रतियोगिता की दृष्टि से क्रांतिक समय है परिणामस्वरूप, प्रारंभिक अवस्था में ही फसलों को खरपतवारों से मुक्त करना लाभदायक होता है। बुवाई के 15–35 दिन के मघ्य फसल की क्रांतिक अवस्था के अनुसार खुरपी या कुदाली द्वारा निराई–गुड़ाई करके खरपतवार निकालना चाहिये।

3. **मृदा सौरीकरण :** खेत में एक ही फसल को लगातार लेते रहने के कारण विशेष खरपतवारों की संख्या में लगातार वृद्धि होती रहती है इसके साथ ही इन खरपतवारों की रोकथाम हेतु रसायनों का उपयोग बढ़ता जा रहा है परिणामस्वरूपय आजकल गैर रसायनों के प्रयोग पर बल दिया जा रहा है। गर्मी के दिनों में जब तापमान 40–50 डिग्री सेन्टीग्रेड तक पहुंच जाता हैं परन्तु खरपतवारों के बीज कठोर होने के कारण सुरक्षित रह जाते हैं। अतः इस विधि से पतली पारदर्शी प्लास्टिक (पोली इथाईलीन) की परत (50 माइक्रोन) बिछाकर 10–20 दिनों के लिये भूमि का तापमान 15–20 डिग्री सेन्टीग्रेड बढ़ जाता है तथा बढे हुये तापक्रम से खरपतवार नष्ट हो जाते है। इस विधि का प्रयोग गर्मी के दिनों में माह अप्रैल–जून में करना चाहिये।

(ग) **शस्य विधियां**

1. **खेतों की ग्रीष्मकालीन जुताई :** इस विधी में् सर्वप्रथम हल्की मिट्टी में डिस्क प्लाऊ तथा मध्यम से भारी मिट्टी में एम. बी. प्लाऊ से गर्मियों में खेतों की गहरी जुताई कर खुला छोड देते हैं। गर्मियों में अधिक गर्मी से मृदा के तापमान में वृद्धि होती है जिससे कई खरपतवार जलकर नष्ट हो जाते हैं तथा उनके बीजों की अंकुरण क्षमता नष्ट हो जाती है और आगामी फसलों में खरपतवार नहीं उगते हैं।

2. **स्वच्छ बीज शैय्या :** बुआई के पूर्व खेत को अच्छी तरह तैयार करना चाहिये तथा दो–तीन दिन के लिये खुला छोड़ देना चाहिये ताकि उसमें उगे खरपतवार नष्ट हो जावे। यदि कृषक के पास सिंचाई उपलब्ध हो तो फसल की बुवाई से पहले सिंचाई कर खरपतवारों को उग आने दे फिर खेत की अच्छी तरह से जुताई कर खरपतवार नष्ट करके बीज शेय्या तैयार करना चाहिये।

3. **बुवाई की विधि :** बुवाई हमेशा कतारों में करना चाहिये ताकि दो कतारों के बीच में निराई–गुड़ाई व अन्य कर्षण क्रियाऐं करने में आसानी रहे और खरपतवारों का प्रभावी ढंग से नियंत्रण किया जा सके।

4. **बुवाई का समय :** फसल को ऐसे समय पर बुवाई की जाये कि खरपतवारों के निकलने से पहले ही खेत को ढक ले या खरपतवारों को एक बार पहले उगने देवे, फिर जुताई कर नष्ट करने के बाद फसल की बुवाई थोड़ी देर बाद करे। अतः परिस्थिति के अनुसार उपयुक्त बुवाई के समय में हेर–फेर करने से खरपतवारों से होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है।

5. **अंतःवर्ती फसलें :** अंतःवर्ती फसलों में हुये शोध परिणाम यह दर्शाते है कि एकल फसल की तुलना में अंतवर्ती फसलों में खरपतवारों का प्रकोप कम होता हैं। जैसे– सरसों की कतारों के मध्य चना, मसूर व मटर की अंतःवर्ती फसलों की बुवाई करके खरपतवारों की रोकथाम की जा सकती है।

6. **उपयुक्त उर्वरक प्रबंधन :** खरपतवार फसलों में दिये गये पोषक तत्वों के लिये प्रतिस्पर्धा करते हैं। यदि उर्वरक उचित समय व विधि से नहीं दिये जाते हैं तो उर्वरको का अधिकतम हिस्सा खरपतवार ग्रहण कर लेते हैं और इस स्थिति में अधिक वृद्धि कर फसल को हानि पहुंचाते हैं अतः उर्वरक छिटकवा पद्धति की अपेक्षा कूंड में बीज के नीचे देना उचित रहता है।

7. **उपयुक्त सिंचाई व्यवस्था :** उपयुक्त सिंचाई व्यवस्था खरपतवारों की रोकथाम में सहायक हो सकती है। यदि खरपतवारों को पर्याप्त नमी मिलती है तो यह वृद्धि कर फसल से अधिक प्रतियोगिता करते हैं। सिंचाई विधियां भी खरपतवारों की सघनता को प्रभावित करती है। बूंद–बूंद सिंचाई विधि से सिंचाई करने पर थाला विधि की अपेक्षा खरपतवारों की रोकथाम ज्यादा अच्छी होती है क्योंकि बूंद–बूंद सिंचाई से पानी पौधे की जडों् के पास दिया जाता है और बाकी का खेत सूखा रहता है इस तरह से खरपतवार बिना नमी के पनप नहीं पाते हैं।

(घ) **रासायनिक विधियां:** फसल के अनुसार निम्नलिखित खरपतवारनाशी की आवश्यक मात्रा को पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से समान रूप से छिडकाव करें। शाकनाशी रसायनों से प्रभावी खरपतवार नियंत्रण के लिए इनका उपयोग बिल्कुल सही समय पर एवं समान रूप से 500–600 लीटर पानी में घोलकर नैपशैक स्प्रेयर के साथ फ्लेट फेन/फ्लड़ जेट नोजल लगाकर छिड़काव करना चाहिए। खरपतवारनाशी दवाऐ स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिकारक (जहर) होती है अतः इनका प्रयोग सावधानी पूर्वक करें तथा इनके पैकेट पर अंकित सभी निर्देशों का पालन करें।

तालिका 2 : रबी फसलों में प्रयोग होने वाले प्रमुख खरपतवारनाशी रसायन

फसल	रसायन का नाम	मात्रा / है.		प्रयोग करने का समय	खरपतवार का प्रकार
		सक्रिय तत्व	कुल दवा		
गेंहू व जौ	2–4 ड़ी एस्टर साल्ट 36 ई.सी.	0.50 किग्रा.	1.4 ली	बुवाई के 30–35 दिन	चौड़ी पत्ती
	2–4 ड़ी अमाइन साल्ट 72 ड़ब्ल्यू एस. सी.	0.750 किग्रा.	1.00 ली	बुवाई के 30–35 दिन	चौड़ी पत्ती
	मेटाक्रिान 80 ड़ब्ल्यू पी.	0.75–1.25 किग्रा.	1.0–1.50 ली.	बुवाई के 30–35 दिन	संकरी पती जंगली जई, गुल्ली ड़ंड़ा
	मेटसल्फ्यूरॉन मिथाईल 20 ड़ब्ल्यू पी.	4.0 ग्राम	20.0 ग्राम + 500 मिली. सरफेक्टेंट	बुवाई के 30–35 दिन	चौड़ी पत्ती
	सल्फोसल्फ्यूरॉन 75 ड़ब्ल्यू पी.	25.0 ग्राम	33.3 ग्राम	बुवाई के 30–35 दिन	संकरी पती जंगली जई, गुल्ली ड़ंड़ा व कुछ चौड़ी पत्ती
	मेटसल्फ्यूरान + कारफनेट्राजॉन + 0.2 प्रतिशत एनआईएस	25 ग्राम	50 ग्राम	बुवाई के 30–35 दिन	चौड़ी पत्ती वाले
	क्लोड़िनोफोप प्रोपारजिल 15 प्रति. + मेटसल्फफ्यूरॉन 1 प्रति	52–60 ग्राम	325–400 ग्राम	बुवाई के 30–35 दिन	संकरी पती जंगली जई, गुल्ली ड़ंड़ा व चौड़ी
	सल्फोसल्फ्यूरॉन 75 प्रति. + मेटसल्फ्यूरॉन मिथाईल 5 प्रति.	32 ग्राम	40 ग्राम	बुवाई के 30–35 दिन	संकरी पती जंगली जई, गुल्ली ड़ंड़ा व चौड़ी
	कारफनेट्राजॉन 40 डी एफ + 0.2 प्रतिशत एनआईएस	20 ग्राम	50 ग्राम	बुवाई के 30–35 दिन	चौड़ी पत्ती वाले
सरसों	पेन्डीमिथेलिन 30 ई. सी.	1.0 ग्राम	3.30 लीटर	बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर छिड़काव	सकरी पत्ती व कुछ चौडी पत्ती वाले
	ऑक्साडायरजिल 6 ई. सी.	90 ग्राम	1.5 लीटर/हैक्टर	बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर छिड़काव	सकरी पत्ती चौडी पत्ती वाले
अलसी	पेन्डीमिथेलिन 30 ई. सी.	1.0 कि.ग्रा.	3.30 लीटर	बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर छिड़काव	सकरी पत्ती व कुछ चौडी पत्ती वाले
	पेन्ड़ीमिथेलीन 30 ई. सी. + ईमाजिथापायर 2 ई. सी.	0.75 किग्रा	2.3 लीटर/हैक्टर	बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर छिड़काव	सकरी पत्ती व चौडी पत्ती वाले
कुसुम	पेन्डीमिथेलिन 30 ई. सी.	1.0 कि.ग्रा.	3.30 लीटर	बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर छिड़काव	सकरी पत्ती व कुछ चौडी पत्ती वाले
चना	पेन्डीमिथेलिन 30 ई. सी.	1.0 कि.ग्रा.	3.30 लीटर	बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर छिड़काव	वार्षिक घासें एवं कुछ चौडी पत्ती वाले खरपतवार
मसूर	पेन्डीमिथेलिन 30 ई. सी.	1.0 कि.ग्रा.	3.30 लीटर	बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर छिड़काव	वार्षिक घासें एवं कुछ चौडी पत्ती वाले खरपतवार
	पेन्ड़ीमिथेलीन 30 ई. सी. + ईमाजिथापायर 2 ई. सी.	0.75 किग्रा	2.34 लीटर	बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर छिड़काव	सकरी पत्ती व चौडी पत्ती वाले
धनियां, मैथी, अजवाईन सौंफ	पेन्डीमिथेलिन 30 ई. सी.	1.0 कि.ग्रा.	3.30 लीटर	बुवाई के 1–3 दिन के अन्दर छिड़काव	वार्षिक घासें एवं कुछ चौडी पत्ती वाले खरपतवार

प्रमुख दलहनी फसलों में कीट व रोग प्रबंधन

संदीप कुमार चौधरी, ममता देवी चौधरी, सुमित्रा देवी बम्बोरिया एवं अरविन्द सिंह तेतरवाल
ज्योति विध्यापिठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर, कृषि विज्ञान केंद्र, मौलासर एवं कृषि विज्ञान केंद्र, पाली

खरीफ में मूंग और उड़द व रबी में चना भारत की महत्वपूर्ण दलहनी फसलें हैं। इनके उत्पादन में हमारा देश विश्व में अग्रणी है। विभिन्न फसलों के साथ और फसल–चकों में उगाये जाने के कारण दलहनी फसलों में मूंग, उड़द और चने का प्रमुख स्थान है। हमारे देश में इसकी खेती दलहनी फसलों के लगभग 30 प्रतिशत भाग में विभिन्न ऋतुओं में मैदानी क्षेत्रों से लेकर समुद्रतल से 1820 मीटर की ऊँचाई तक होती है। जबकि मोठ की खेती मुख्यतया राजस्थान में की जाती है जो की सबसे अधिक सूखे को सहन करने वाली दलहनी फसल है।

चने में कीट एवं रोग प्रबंधन

कीट प्रबंधन

फली छेदक कीट : फसल की प्रारम्भिक अवस्था में सूडियां चने की पत्तियों, कलियों और फूलों को खाती हैं, बाद में ये चने की फली के अंदर घुसकर दानों को खाकर फली को खोखला बना देता है। फली खोखली होने पर पीली पड़ कर सूख जाती है। सूंड़ी की पहली अवस्था दिखाई देते ही 250 एलई के एनपीवी को 1 किलोग्राम गुड़ और 0.1 फीसदी टीपोल में घोल कर प्रति हेक्टेयर की दर से 10–12 दिनों के फासले पर छिड़काव करें। इसके अलावा 5 फीसदी एनएसकेई का छिड़काव करें। प्रकोप बढ़ने पर इंडोक्साकार्ब 14.5 एससी 0.5 मिलीलीटर प्रति लीटर या इमामैक्टिन बेंजोएट 5 एसजी 0.5 ग्राम प्रति लीटर या स्पाइनोसैड 45 एससी 0.1 मिलीलीटर या फ्लूबेंडामाइड 39.35 एससी 0.33 मिलीलीटर प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें।

कटुआ सूंडी / कटवर्म : कटवर्म की लटें ढेलों के नीचे छिपी होती है तथा रात में पौधों को जड़ों के पास काटकर फसल को नुकसान पहुँचाती हैं। इसके नियंत्रण हेतु शाम के समय ट्राईक्लोरोफॉन 5% चूर्ण की 25 किलोग्राम मात्रा को प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव करना चाहिये या नीम का तेल 3 फीसदी की दर से छिड़कें। खड़ी फसल में रोकथाम के लिए 200 मि.ली. फेनवालरेट (20 ई.सी.) या 125 मि.ली. साइपरमैथ्रीन (25 ई.सी.) को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यकतानुसार छिड़काव करें। जैविक नियंत्रण हेतु गर्मी में गहरी जुताई एवं समय से बुवाई करें। उचित फसल चक्र अपनाना चाहिए। भूमिशोधन हेतु विवेरिया बैसियाना 2.5 किग्रा प्रति हैक्टेयर की दर से 50–60 किलोग्राम अध सडे गोबर में मिलाकर 8–10 दिन रखने के उपरान्त प्रभावित खेत में प्रयोग करना चाहिए। मेटाराइजियम एनीसोप्ली 2.5 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से 400–500 लीटर पानी में घोल कर सायंकाल छिडकाव करना चाहिए।

रोग प्रबंधन

झुलसा रोग : इस बीमारी के कारण पौधें की जड़ों को छोड़कर तने पत्तियों एवं फलियों पर छोटे गोल तथा भूरे रंग के धब्बे बन जाते है। पहले प्रभावित पौधे पीले व फिर भूरे रंग के हो जाते है तथा अन्ततः पौधा सूखकर मर जाता है। इस रोग के लक्षण दिखाई देने पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड की 1.3 किग्रा. मात्रा को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिये।

उखटा रोग : इस रोग में प्रभावित पौधे पीले रंग के हो जाते हैं तथा नीचे से ऊपर की ओर पत्तियाँ सूखने लगती हैं अन्ततः पौधा सूखकर मर जाता है। यदि सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो तो बीमारी के लक्षण दिखाई देते ही सिंचाई कर देनी चाहिये। उकठा रोग निरोधक किस्मों का प्रयोग करना चाहिए। प्रभावित क्षेत्रो में फसल चक्र अपनाने के साथ ही गहरी जुताई करें। प्रभावित पौधा को उखाडकर नष्ट कर देना चाहिये। बीज को टेबुकोनाजोल 20 प्रतिशत 1 एम.एल या ट्राइकोडर्मा विरडी 4–6 ग्राम / किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर बोना चाहिए।

जड़ सड़न : यह मृदाजनित बीमारी है जिसमें रोगी पौधे पीले पड़ने लगते हैं। तने के कालर के ऊपर तक गहरा भूरा धब्बा पैदा हो जाता है। यह धब्बा शाखाओं में फैल जाता है। तने और जड़ के निचले भाग सड़े हुए और दाने काले दिखाई देते हैं। रोगग्रस्त पौधों एवं उनके अवशेष को जलाकर नष्ट कर दें या उखाड़कर गहरा जमीन में दबा दें। अधिक गहरी सिंचाई न करें। बीजों को बोने से पहले ट्राईकोडर्मा विरीडी की 4–6 ग्राम मात्रा से बीजों को प्रति किलोग्राम की दर से शोधित करें। अधिक प्रकोप होने पर टेबुकोनाजोल 20 प्रतिशत 1 एम. एल प्रति लीटर छिड़काव करें।

किट्ट रोग : इस बीमारी में पत्तियों की ऊपरी सतह पर फलियों पर्णवृतों तथा टहनियों पर हल्के भूरे काले रंग के उभरे हुए चकत्ते बन जाते हैं। इस रोग के लक्षण दिखाई देने पर या घुलनशील गन्धक की एक किग्रा या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड की 1.3 किग्रा मात्रा को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिये। 10 दिनों के अन्तर पर 3–4 छिड़काव करने पर्याप्त होते हैं।

मूंग, उड़द व मोठ में कीट एवं रोग प्रबंधन

मूंग, मोठ और उड़द की फसल विभिन्न विषाणुओं, कवकों व जीवाणुओं से उत्पन्न होने वाले रोगों से प्रभावित होती है। यदि इन रोगों की सही

समय पर पहचान करके प्रबंधन कर लिया जाये, तो पैदावार में होने वाले ह्रास से रोका जा सकता है।

कीट प्रबंधन

मोयला, हरा तेला व सफेद मक्खी: ये पौधों की पत्तियों से रस चूसकर फसल को नुकसान पहुंचाते है। इन कीटो की रोकथाम के लिए नीम सीड कर्नेल एक्सट्रेक्ट 5% (NSKE 5%) या इमिडाक्लोप्रिड की 300 मि.ली. या थीयमेथोक्साम 25 डब्ल्यू. जी. 200 ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

फली छेदक: यह कीट फसल के पौधों की पत्तियों को खाकर फसल को नुकसान पहुंचाता है। इसकी रोकथाम के लिए इंडोक्साकार्ब 14.05 एससी 0.5 मिलीलीटर प्रति लीटर या एजाडिरेक्टिन 0.03 ई.सी. 500 मि.ली. प्रति हेक्टेयर की दर से या एमामेक्टिन बेन्जोयेट 5 प्रतिशत एस.जी. 0.4 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिडकाव करें।

दीमक: इससे पौधा कुछ ही दिनों में सूख जाता है। खेत में कच्चे गोबर का प्रयोग नहीं करना चाहिए। दीमक की रोकथाम के लिए अंतिम जुताई के समय क्लोरोपाइरिफॉस 20 ई.सी. 1.5 लीटर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिए तथा नीम की खली 5 क्विंटल प्रति हैक्टर की दर से बुवाई से पूर्व खेत में मिलाने से दीमक के प्रकोप में कमी आती है।

कातरा: कातरा की लट फसल की प्रारंभिक अवस्था में पौधों को काट कर हानि पहुंचाती है। इसके नियंत्रण के लिए खेत के चारों तरफ का क्षेत्र साफ रहना चाहिए तथा लट के प्रकोप होने पर क्लोरेनट्रानिलीप्रोल 0.4 प्रतिशत जी. आर. 4–7.5 किग्रा प्रति एकड के हिसाब से प्रयोग करने चाहिए।

रोग प्रबंधन

पीला मोजेक विषाणु रोग: इस रोग में प्रभावित पत्तियां पूरी तरह से पीली हो जाती है एवं आकार में छोटी रह जाती है। इसकी रोकथाम के लिए रोगवाहक सफेद मक्खी का नियंत्रण आवश्यक है। लक्षण दिखाई देने पर NSKE 5% या इमिडाक्लोप्रिड 300 मि.ली. या थीयमेथोक्साम 25 डब्ल्यू. जी. 250 ग्रा. सक्रिय तत्त्व प्रति हेक्टेयर की दर से 500 लीटर पानी में घोलकर बनाकर छिड़काव कर देना चाहिए।

पर्ण संकुचन: मूंग और उड़द में पर्ण कुंचन रोग दक्षिणी प्रदेशों में फसल को नुकसान करता है परन्तु उत्तर भारत में इस रोग का प्रकोप अधिक नहीं है। इस रोग के लक्षण पौधे पर प्रारम्भिक अवस्था से लेकर अन्तिम अवस्था तक किसी भी समय प्रकट हो सकते हैं। प्रथम लक्षण सामान्यत: तरुण पत्तियों के किनारे पर पार्श्व शिराओं और उसकी शाखाओं के चारो और हरितमा का प्रकट होना है। संक्रमित पत्तियों के सिरे नीचे की ओर कुंचित हो जाते है और यह भंगुर हो जाती हैं। ऐसी पत्तियों को यदि उंगली द्वारा थोड़ा सा झटका दिया जाए, तो यह डंठल सहित नीचे गिर जाती हैं। संक्रमित पौधों की वृद्धि रुक जाती है। यह पौधे खेत में अन्य पौधों की तुलना में बौने से दिखते हैं तथा इस कारण खेत में दूर से ही पहचाने जा सकते हैं। इस रोग के रोकथाम के बारे में शोध कार्य जारी है। अभी तक हुए शोध कार्यो के आधार पर बीजों को कीटनाशी इमिडाक्लोप्रिड 5 मि.ली. प्रति किलोग्राम की दर से बीजोपचार और बुबाई के 15 दिन उपरान्त इसी कीटनाशी से छिड़काव 0.5 मिलीलीटर प्रति लीटर से इस रोग का प्रकोप कम किया जा सकता है।

चिती जीवाणु रोग: इस रोग के कारण छोटे गहरे भूरे रंग के धब्बे पत्तियों, फलियों एवं तनो पर दिखाई देते हैं। इसके नियंत्रण हेतु स्ट्रेप्टोसाइक्लिन / एग्रीमाइसिन की 200 ग्राम मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। मूंग के बीज को 100 पीपीएम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (1 ग्राम को 10 लीटर पानी में) के घोल में एक घंटा भिगोकर सुखाने के पश्चात बुवाई करनी चाहिए या 500 पीपीएम का छिड़काव करना चाहिए।

तना झुलसा रोग: इस रोग के कारण पौधे मुरझाने लगते हैं। इसके नियंत्रण हेतु स्ट्रेप्टोसाइक्लिन / एग्रीमाइसिन की 200 ग्राम मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

सरकोस्पोरा रोग: इस रोग के कारण पत्तियों पर कोणदार भूरे लाल रंग के धब्बे बन जाते हैं। रोगी पौधे की नीचे की पत्तियां पीली पड़कर सूखने लगती है तथा पौधों की जड़े भी सूख जाती है। इस रोग के नियंत्रण के लिए डाईफेनाकोनाजोल 25 प्रतिशत ई. सी. 0.5 एम. एल. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

पत्तियों का धब्बा रोग : पत्तियों पर गोलाई लिये हुए कोणीय धब्बे बनते हैं, जिसमें बीच का भाग हल्के राख के रंग का या हल्का या भूरा और किनारा लाल बैंगनी रंग का होता है। इसके नियंत्रण के लिए मूंग की फसल में 3 किलोग्राम कापर आक्सीक्लोराइड प्रति हेक्टर, 10 दिन के अन्तर पर 2 से 3 छिड़काव करना चाहिए या प्रोपिकोनाजोल 25 प्रतिशत ई. सी. 0.5 एम. एल. प्रति लीटर का छिडकाव करना चाहिए।

पीलिया रोग: इसके लक्षण दिखाई देते ही 0.1 प्रतिशत गंधक के तेजाब या 0.5 प्रतिशत फेरस सल्फेट का पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

अरहर में कीट प्रबंधन

फली छेदक कीट: फसल की प्रारम्भिक अवस्था में सूड़ियां अरहर की पत्तियों, कलियों और फूलों को खाती हैं, बाद में ये अरहर की फली के अंदर घुसकर दानों को खाकर फली को खोखला बना देता है। फली खोखली होने पर पीली पड़ कर सूख जाती है। सूंड़ी की पहली अवस्था दिखाई देते ही 250 एलई के एनपीवी को 1 किलोग्राम गुड़ और 0.1 फीसदी टीपोल में घोल कर प्रति हेक्टेयर की दर से 10–12 दिनों के फसल पर छिड़काव करें। इसके अलावा 5 फीसदी एनएसकेई का छिड़काव करें। प्रकोप बढ़ने पर

इंडोक्साकार्ब 14.5 एससी 0.5 मिलीलीटर प्रति लीटर या इमामैक्टिन बेंजोएट 5 एसजी 0.5 ग्राम प्रति लीटर या स्पाइनोसैड 45 एससी 0.1 मिलीलीटर या फ्लूबेंडामाइड 39.35 एससी 0.33 मिलीलीटर प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें।

पत्ती लपेटक: मादा आमतौर पर फलियों पर गुच्छों में अंडे देती है। इस कीट के शिशु और वयस्क दोनों ही फली तथा दानों का रस चूसते हैं। जिससे फलियाँ आड़ी–तिरछी हो जाती है व दाने सिकुड़ जाते है। आपना जीवन चक्र लगभग चार सप्ताह में पूरा करते है। इसके नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस. एल. 0.5 मिली. प्रति लीटर के हिसाब से छिडकाव करें।

प्लू माथ: इस कीट की इल्ली फली पर छोटा सा गोल छेद बनाती है। प्रकोपित दानों के पास ही इसकी विष्टा देखी जा सकती है। कुछ समय बाद प्रकोपित दाने के आसपास लाल रंग की फफूंद लग जाती है। इसकी इल्लियॉ हरी और छोटे–छोटे काटों से आच्छादित रहती है। इल्लियां फलियों पर ही शंखी में परिवर्तित हो जाती है। यह अपना जीवन चक्र लगभग चार सप्ताह में पूरा करती है। इसके नियंत्रण के लिए प्रोफेनोफॉस 50 ई सी की 1000 मिलीलीटर मात्रा को 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

रोग प्रबंधन

तना विगलन: तना विगलन अरहर के पौधे की परवर्ती वृद्धि अवस्थाओं पर जल स्तर के निकट बाहरी पर्ण–छद पर छोटे, काले से अनियमित क्षतिचिन्हों के साथ प्रारंभ होता है। इससे पौधा सूख जाता है। बीजों को बोने से पहले ट्राईकोडर्मा विरीडी की 10 ग्राम मात्रा से बीजों को प्रति किलोग्राम की दर से शोधित करें। अधिक प्रकोप होने पर टेबुकोनाजोल 20 प्रतिशत 1 एम.एल प्रति लीटर छिड़काव करें।

उकठा रोग: इस रोग के लक्षण आमतौर पर फसल में फूल लगने की अवस्था पर दिखाई पड़ते है। सितंबर से जनवरी महीनों के बीच में यह रोग देखा जा सकता है। पौधा पीला होकर सूख जाता है। इसमें जडें सड़ कर गहरे रंग की हो जाती है और छाल हटाने पर जड़ से लेकर तने की ऊंचाई तक काले रंग की धारियां पाई जाती है। रोकथाम हेतु रोगरोधी किस्में जैसे– जे के एम– 189, सी– 11, जे के एम– 7, बी एस एम आर– 853, बी एस एम आर– 736, आशा इत्यादि उगाएं। गर्मी में गहरी जुताई और अरहर के साथ ज्वार की अंतरवर्तीय फसल लेने से इस रोग का संक्रमण कम होता है। बीज को टेबुकोनाजोल 20 प्रतिशत 1 एम. एल या ट्राइकोडर्मा विरडी 10 ग्राम किलो प्रति बीज की दर से उपचारित कर बोना चाहिए।

मोजेक रोग: यह रोग विषाणु जनित रोग है। इसके लक्षण ग्रसित पौधों के ऊपरी शाखाओं में पत्तियां छोटी, हल्के रंग की एवं अधिक लगती है तथा फूल–फली नहीं लगती है। यह रोग माईट, कीट के द्वारा फैलता है। इस रोग के नियन्त्रण हेतु रोग रोधी किस्मों जैसे– आई सी पी एल– 87119 (आशा), बी एस एम आर– 853, 736, राजीव लोचन, बी डी एन– 708, की बुआई करनी चाहिए। इस रोग के नियंत्रण की रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस. एल. 0.5 मिली. प्रति लीटर के हिसाब से छिडकाव करें।

झुलसा रोग: रोग ग्रसित पौधे पीला होकर सूख जाते है। इसमें तने पर जमीन के ऊपर गठान नुमा असीमित वृद्धि दिखाई देती है और पौधे हवा आदि चलने पर यहीं से टूट जाते है। इस रोग के लक्षण दिखाई देने पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड की 1.3 किग्रा. मात्रा को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिये।

❋❋❋

गेहूँ की फसल में खरपतवार नियंत्रण

उदिति धाकड़, बलदेव राम, चमन जादौन एवं शंकर लाल यादव
कृषि महाविद्यालय, कोटा, कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा एवं कृषि अनुसंधान उपकेन्द्र, खानपुर

कृषि को मानसून का जुआ कहा जाता है। पिछले कई वर्षा की मात्रा में गिरावट आने लगी है और वर्षाकाल में वर्षा की मात्रा में निरन्तर कमी के परिणामस्वरूप रबी में अधिक पानी चाहने वाली फसलों विशेषतः गेहूँ आदि, फसलों का सफल एवं अच्छा उत्पादन लेना एक चुनौतीपूर्ण कार्य हो गया है। गेहूँ में खरपतवारों के कारण उपज में लगभग 30–40 : तक कमी आ जाती है। खरपतवार फसल के साथ उगकर पानी, वायु, प्रकाश एवं बीमारियों को भी बढ़ावा देते हैं और अन्त में फसल की कटाई में भी बाधा पहुंचाते हैं फलस्वरूप आर्थिक नुकसान होता है। अतः यदि कृषक गेहूँ उत्पादन की नवीन तकनीकी अपनाएं जैसे खरपतवारों को समय पर नियंत्रित तथा कुशल जल प्रबन्धन करें तो कम पानी द्वारा भी अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। गेहूँ की खेती भारत में लगभग 30.33 करोड़ हेक्टेयर में की जाती है। आंकड़ों के अनुसार सन् 2020–21 में भारत की गेहूँ उत्पादकता 34.21 क्विंटल प्रति हेक्टेयर थी। राजस्थान में गेहूँ की खेती 30.3 लाख हेक्टेयर में की जाती है। यहां गेहूँ के उत्पादन बढ़ाने की काफी संभावनाऐं हैं। यदि कृषक गेहूँ उत्पादन की नवीन तकनीकी अपनाकर खरपतवारों का नियंत्रण करें तो अधिक उपज ली जा सकती है।

राजस्थान में गेहूँ की कम उपज के प्रमुख कारण

1. अधिक उपज देने वाली किस्मों के प्रमाणित बीज का नहीं बोना।
2. खरपतवारों को समय पर नियंत्रण न करना।
3. कुशल जल प्रबन्धन नहीं करना।
4. उर्वरकों का संतुलित मात्रा में व सही विधि से उपयोग न करना।
5. लगातार एक ही फसल चक्र अपनाना।
6. गेहूँ की बुवाई समय पर न करना।

गेहुँ की फसल में बुवाई के बाद खरपतवारों का विशेष रूप से प्रथम सिंचाई के उपरान्त ज्यादा प्रकोप रहता है। खरपतवारों की सघनता शस्य–जलवायुवीय स्थितियों एवं प्रबन्ध के स्तर पर निर्भर करती है। विभिन्न शोध परिणामों से यह स्पष्ट हो चुका है कि अनियंत्रित खरपतवारों के कारण प्रति पौधे प्ररोहों, दानों का भार, प्रति बाली दाने एवं उपज कम हो जाती है। खरपतवार शुष्क पदार्थ एवं उपज प्रति पौधे में नकारात्मक सम्बन्ध पाया गया है। गेहूँ की फसल में खरपतवारों का प्रभाव उपज पर सीधा पड़ता है तथा यह स्थान, प्रजाति, समय एवं सघनता के आधार पर परिवर्तित होता रहता है। गेहूँ में खरपतवारों के प्रभाव का क्रान्तिक समय बोने के लगभग 4–6 सप्ताह तक है, यदि इस समय में फसल को खरपतवारों से मुक्त रखा जाए जो अधिक उपज व लाभ मिलता है। खरपतवार फसल के साथ पानी, वायु, प्रकाश एवं पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। विभिन्न शोध परिणामों में यह पाया गया है कि गेहूँ में खरपतवारों द्वारा पोषक तत्वों एवं पानी का ह्रास किया जाता है जो तालिका :1 में दर्शाया गया है।

अतः स्पष्ट है कि गेहूँ की फसल के समान मात्रा का शुष्क पदार्थ पैदा करने में, खरपतवार फसल से कहीं ज्यादा पानी अवशोशित कर वाष्पोत्सर्जन करते है तथा पानी एवं पोषक तत्वों का नुकसान करते है। इतना ही नहीं खरपतवारों की जड़ें अधिक गहरी होती है (90–125 से.मी. तक) जबकि गेहूँ की जड़ें केवल ऊपरी सतह (15–20 से.मी. तक) सीमित रहकर जल एवं पोषक तत्वों का अवशोषण करती है। खरपतवारों से गेहूँ फसल 30–40 प्रतिशत उपज में कमी तक होती है।

तालिका : 1 गेहूँ की फसल में विभिन्न खरपतवारों द्वारा पानी एवं पोषक तत्वों का ह्रास

गेंहूं एवं खरपतवार	वाष्पोत्सर्जन गुणांक (मिलीमीटर पानी ह्रास प्रति ग्राम शुष्क पदार्थ)	पोषक तत्व ह्रास (कि.ग्रा./हेक्टेयर)		
		नत्रजन	फॉस्फोरस	पोटाश
गेंहूँ	479	59.30	12.80	46.80
खरपतवार	336-1402	21.70	2.90	28.20
	पोषक तत्व मात्रा (प्रतिशत)			
बथुआ	550	2.59	0.37	4.34
जंगली चौलाई	336	3.16	0.06	4.51
धमासा	1108	-	-	-
फुलनी	1402	-	-	-
सत्यनाशी	-	1.36	1.36	1.33
हिरनखुरी	-	1.01	1.01	2.00
मोथा	-	0.26	0.26	2.73
सेंजी	-	1.53	1.53	1.85
गेंहूँ	-	0.59	0.59	1.44

इसके अलावा, कई खरपतवार कीट एवं व्याधियों को आश्रय एवं बढ़ावा देते हैं। अत्यधिक खरपतवारों के कारण गेहूँ की फसल की कटाई में भी बाधा पहुँचती है जिससे अधिक समय व धन का व्यय होता है। इसके अलावा, उत्पादन में कमी के साथ–साथ गेहूँ की गुणवत्ता में भी गिरावट हो जाती है फलस्वरूप कम मूल्य मिलता है और निर्यात में भी व्यवधान पैदा होता है। यदि किसान खरपतवार युक्त बीज को अगले वर्ष बोते है तो और भी ज्यादा खरपतवार खेत में उग आते है जिनकों नियंत्रण करने में काफी खर्चा होता है। अतः खरपतवारों को नियंत्रित करना आवश्यक है।

गेहूँ में मुख्यतया गुल्ली डण्डा, जंगली जई, मोथा, दूबधास, बथुआ, खरतुआ, चटरी–मटरी, हिरन खुरी, सेंजी, जंगलीपालक, जंगली गोभी, गजरी, प्याजी, इत्यादि पाए जाते है जिनकी सघतना क्षेत्र विशेष पर निर्भर करती है (तालिका–2)। गेहूँ में खरपतवारों को विभिन्न विधियों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है जो निम्न प्रकार है

1. यांत्रिक विधियां एवं शस्य क्रियाओं द्वारा।
2. रासायनिक खरपतवारों द्वारा।

यांत्रिक विधियों एवं शस्य क्रियाओं द्वारा खरपतवार नियंत्रण

खरीफ की फसल कटने के उपरान्त, खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए। इसके पश्चात् 3–4 जुताई आर–पार डिस्क हैरो या कल्टीवेटर से करें। पलेवा करने के पश्चात् उगने वाले खरपतवारों को जुताई द्वारा नष्ट कर मिट्टी में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। गेहूँ की बुवाई के बाद यदि खेत में खरपतवार दिखाई दे तो ''हैड हो'', खुरपी या कुदाली से निराई–गुड़ाई करना अच्छा रहता है। निराई–गुड़ाई हमेशा, प्रथम सिंचाई के बाद 10–12 दिन के अन्दर कम से कम एक बार अवश्य करें इससे खरपतवारों द्वारा पानी का अवशोषण व वाष्पीकरण नहीं हो पाएगा और खेत में ज्यादा दिनों तक नमी बनी रहेगी जो फसल के उपयोग में आयेगी, बाद में भी आवश्यकतानुसार समय–समय पर निराई–गुड़ाई अवश्य करें, इससे खरपतवार नियंत्रण के साथ ही, मृदा में वायु संचार बढ़ने से गेहूँ की वृद्धि एवं उपज में बढ़ोतरी होती है साथ ही नमी संरक्षण भी होता है।

खरपतवारनाशी रसायनों द्वारा खरपतवार नियंत्रण

कई बार समय पर मजदूर न मिलने या ज्यादा खर्चे के कारण, निराई गुड़ाई संभव नहीं हो पाती है और खरपतवारों का अत्यधिक प्रकोप हो जाता है। ऐसी परिस्थितियों में खरपतवारों का खरपतवारनाशी रसायनों से नियंत्रण काफी कारगर एवं कम खर्चीला साबित होता है। विभिन्न प्रकार के खरपतवारनाशक बाजार में उपलब्ध हैं जिनकी मात्रा व उपयोग तालिका–2 में दर्शाया गया है। खरपतवारनाशी रसायन उगते हुए व उगे हुए खरपतवारों को नष्ट कर देते हैं तथा अन्य को उगने से रोकते हैं। इन खरपतवारों के लिए खेत में थोड़ी नमी हो तो इनका प्रभाव व क्रियाशीलता बढ़ जाती है। गेहूँ के खरपतवारनाशक चुनिंदा प्रकार के होते हैं जो विभिन्न खरपतवारों को भिन्न–भिन्न रासायनिक क्रियाओं द्वारा नष्ट कर देते हैं और यदि सही प्रकार से प्रयोग में लिये जाए जो गेहूँ की फसल को नुकसान नहीं पहुंचाते हैं। खरपतवारनाशक, खरपतवारों को शीध्र नष्ट कर देते हैं जिससे उनमें फूल व बीज नहीं बनते है तथा उनका प्रसारण नहीं हो पाता है जिससे अगले वर्ष फसल में खरपतवारों का प्रकोप काफी हद तक कम हो जाता है। गेहूँ में बुवाई पश्चात् (पोस्ट इमरजेन्स) खरपतवार नाशकों का प्रयोग करने से मरे हुये खरपतवार मल्च (अवरोध) का कार्य करते हैं, जिससे भूमि से होने वाले जल के वाष्पीकरण में कमी आ जाती है। फलतः नमी सरंक्षण होता है जिसका उपयोग फसल वृद्धि में हो जाता है।

इस प्रकार यदि समय पर खरपतवारों का नियंत्रण करें तो पानी की मात्रा में कमी किये जाने के साथ–साथ पोषक तत्वों का नुकसान भी कम किया जा सकता है और इनका उपयोग गेहूँ की फसल द्वारा भली भांति किया जा सकेगा तथा अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है।

खरपतवारनाशक की मात्रा ज्ञात करना

कई बार कृषकों को खरपतवारनाशी की सही मात्रा ज्ञात करने या जानने में परेशानी होती है। अतः स्वयं किसान भी सूत्र द्वारा सही मात्रा ज्ञात कर सकते हैं। इसके लिये खरपतवारनाशक के डिब्बे पर उसकी सान्द्रता (प्रतिशत) ई.सी., डब्ल्यू.पी., जी, एस.पी., डब्ल्यू.एस.पी., एल. या एस.एल. के रूप में लिखी होती हैं।

$$\text{खरपतवारनाशक की मात्रा प्रति हेक्टेयर (कि.ग्रा. प्रति लीटर)} = \frac{\text{खरपतवारनाशक के प्रयुक्त किए जाने वाले सक्रिय तत्व की मात्रा (a.i)}}{\text{खरपतवारनाशक की सान्द्रता (\%)}} \times 100$$

खरपतवानाशकों के प्रयोग सम्बंधी सावधानियां

कई बार खरपतवारनाशक रसायनों के गलत प्रयोग से दुर्घटनाएँ हो जाती है अतः निम्न सावधानियों को ध्यान में रखें और सुरक्षित रहें।

1. रसायन छिड़कने वाले कीट/मास्क व दस्तानों का प्रयोग अवश्य करें।
2. उचित समय पर खरपतवारनाशक की सही मात्रा का प्रयोग करें।
3. स्प्रेयर में प्लेटफेन/प्लेट जेट नोजल लगाकर छिड़काव करें।
4. छिड़काव हेतु निर्धारित/अनुशंसित रसायन मात्रा का पानी में घोल बनाकर स्प्रे करें।
5. ध्यान रखें कहीं भी दोहरा छिड़काव न होने पाये। इन खरपतवारों के मामूली प्रकोप वाले खेतों मे जब खरपतवार बड़े हो जायें तब इनको बीज बनने से पहले खेत से निकाल कर मवेशियों को खिलावें।
6. वायु के बहाव के समानान्तर छिड़काव करें, विपरीत दिशा में न करें ताकि रसायन शरीर पर न गिरे।
7. छिड़काव पूरे खेत में समान रूप से करें एवं एक ही व्यक्ति से बहुत ज्यादा देर स्प्रे न करावें।
8. छिड़काव पश्चात् स्प्रेयर को अच्छी तरह साफ करके रखें।
9. खाली रसायन के डिब्बों को तोड़कर, भूमि में गहरा गाड़ देवें।
10. नींदानाशक रसायन को खाद्य पदार्थो के पास न रखे तथा बच्चों से दूर रखें।
11. छिड़काव के समय खाने–पीने की वस्तुओं, बीड़ी सिगरेट, पान, तम्बाकू या अन्य चीजे न खायें।
12. पूर्ण रूप से खाली पेट स्प्रे न करें एवं हो सके तो एक साथी जरूर साथ ले जावें।
13. रसायनों को न सूघें, न चखें और न ही स्पर्श करें अन्यथा त्वचा पर विपरीत असर पड़ सकता है।
14. नींदानाशकों को लकड़ी की सहायता से घोलें और स्प्रे करने वाले के शरीर पर किसी प्रकार का घाव आदि न हो।
15. छिड़काव के पश्चात् शरीर व कपड़ों को साबुन से अच्छी तरह साफ करें।
16. यदि हो सके तो, छिड़काव रसायन की खरीद रसीद, अन्य जानकारियां जैसे नाम आदि कागज या डायरी में लिख लें।
17. खरपतवारनाशक छिड़कते समय या बाद में किसी प्रकार का शरीर पर प्रतिकूल प्रभाव महसूस हो तो तुरन्त पास के अस्पताल में डॉक्टर को दिखाएँ।

तालिका : 2 गेहूँ की फसल में खरपतवार नियंत्रण हेतु खरपतवार नाशक प्रयोग एवं जानकारी

क्र.सं.	खरपतवार नाशक का तकनीकी नाम	व्यापारिक नाम	रासायनिक फार्मूलेशन	प्रयोग की जाने वाली मात्रा		प्रयोग का तरीका
				सक्रिय तत्व /है.	प्रयुक्त मात्रा/ है.	
1	2–4 डी (एस्टर साल्ट)	ब्लोडेक्स सी, बीडोन	36% ई.सी	36% ई.सी	1.4 ली./हे.	चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु प्रयुक्त करें।बौनी किस्मों बुवाई के 30–35 दिन व अन्य किस्मों में 40–50 दिन पर 500–700 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। 2–4, डी का प्रयोग अर्जुन (एच.डी. 2009) किस्म में न करें।
2	2–4 डी (अमाइन साल्ट)	ब्लोडेक्स जी, बीडार	72% डब्ल्यू. एसी.सी.	750 ग्राम/हे.	1.0 ली./हे.	चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु प्रयुक्त करें।बौनी किस्मों बुवाई के 30–35 दिन व अन्य किस्मों में 40–50 दिन पर 500–700 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। 2–4, डी का प्रयोग अर्जुन (एच.डी. 2009) किस्म में न करें।
3	आइसोप्रोटोरोन	टोल्फान, एरिलोन, ग्रामिरोन	75% डब्ल्यू.पी	750 ग्राम/हे. (हल्की मिट्टी में)	1.0 कि.ग्रा./हे	संकरी पत्ती वाले खरपतवार – जंगली जई, गुल्ली डंडा को नियंत्रण मे प्रभावी। बुवाई के 30–35 दिन बाद प्रथम सिंचाई पश्चात् 500–700 लीटर पानी में घोलकर एकसार छिड़काव करें।
4	मेटाक्सिरान	डोसानेक्स	80% डब्ल्यू.पी	750 ग्राम/हे. (हल्की मिट्टी में) 1.25 कि. ग्रा./हे (भारी मिट्टी में)	940 ग्रा./हे 1.5 कि. ग्रा./हे	घास कुल व चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित करता है। बुवाई के 30–35 दिन बाद प्रथम सिंचाई करने के उपरान्त 500–700 लीटर पानी में घोल बनाकर एक सार छिड़काव करें।
5	मेंजोबेन्जाथायोजूरान	ट्राइबूनिल	70% डब्ल्यू.पी.	750 ग्राम/हे. (हल्की मिट्टी में) 1.25 कि. ग्रा/हे. (भारी मिट्टी में)	1.0 कि.ग्रा./हे. 1.75 कि. ग्रा/हे. (भारी मिट्टी में)	संकरी पत्ती वाले खरपतवार – जंगली जई, गुल्ली डंडा को नियंत्रण्रा मे प्रभावी। बुवाई के 30–35 दिन बाद प्रथम सिंचाई पश्चात् 500–700 लीटर पानी में घोलकर एकसार छिड़काव करें।
6	मेटसफ्यूरोन मिथाइल	एलग्रिप	20% डब्ल्यू. पी.	4 ग्राम/हे.	20 ग्रा./हे.	चौडी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रण करने हेतु प्रथम सिंचाई के बाद (30–35 दिन फसल अवस्था पर) 500 मिलीलीटर सरफेक्टेंट के साथ पानी में घोलकर छिड़काव करें।
7	सल्फोसल्फ्यूरान	लीडर	75% डब्ल्यू.पी.	25 ग्राम/हे.	33.3 ग्रा./हे	संकरी पत्ती (जंगली जई, गुल्ली डंडा/गेहूँसा) व कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को भी नष्ट करता है।प्रथम सिंचाई के बाद (30–35 दिन की फसल अवस्था पर) 0-5% सरफेक्टेंट के साथ पानी में घोलकर छिड़काव करें।
8	सल्फोसफयूरॉन + मेटसल्फयुरॉन मिथाईल	टोटल	75 % + 5 % डब्ल्यू. जी.	32 ग्राम सक्रिय तत्व	40 ग्रा./हे	रसायन प्रति हैक्टेयर की दर से 400–500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिडकाव करे।
9	काफेन्ट्राजान + मेटसल्फ्युरान मिथाईल + 0.2 प्रतिशत एनआईएस		20 + 4	25 ग्राम सक्रिय तत्व	104 ग्रा./हे	बुवाई के 30–35 दिन के अंदर 400–500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिडकाव करें।
10	क्लोडिनोफोप प्रोपार्जिल + मेटसल्फयुरान मिथाईल	वेस्टा	15% + 1% मिश्रित उत्पादन	52 ग्राम सक्रिय तत्व	325 ग्रा./हे	सकड़ी व चौड़ी पत्ती खरपतवारों को नष्ट करता है। बुवाई के 30–35 दिन पश्चात (पहली सिंचाई के बाद) 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

***

मृदा स्वास्थ प्रबंधन द्वारा रबी फसलों हेतु खेत की तैयारी कैसे करें

अनिल कुमार, आकाश तंवर एवं सरिता
कृषि महाविधालय, बीकानेर, कृषि महाविद्यालय, उदयपुर एवं कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

विश्व की कुल भूमि का 2.5 हिस्सा भारत के पास है। दुनिया की 17 प्रतिशत जनसंख्या का भार भारत में है। देश की जनसंख्या सन् 2050 तक करीब एक अरब 61 करोड़ 38 लाख से ज्यादा होने की सम्भावना है। वही, सन् 1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आधुनिक कृषि की नींव पडी, इसके बाद 1965–66 में हरित क्रान्ति के द्वारा भारत खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर हुआ। इस आत्म निर्भरता में रबी फसलों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वर्ष 2020–21 में खाद्यान्न उत्पादन 304 मिट्रिक टन होने की सम्भावना है। यह इसलिए सम्भव हो पाया है कि किसान भाई समय–समय पर मृदा प्रबंधन एवं खेत की तैयारी पर विशेष ध्यान देते रहे है। विश्व की बढ़ती जनसंख्या एवं कम होती खेती युक्त भूमि एवं जल के साथ ही जनसंख्या के भरण पोषण हेतु खाद्यान्न की आवश्यकता को नकारा नही जा सकता। मिट्टी के अतिरिक्त क्या अन्य किसी वस्तु को पृथ्वी पर उपस्थित जीवन के लिए सर्वाधिक उपयोगी सोचा जा सकता है। सम्पूर्ण मानव के जीवन का आधार मिट्टी ही है, मिट्टी से ही मानव एवं जीव जन्तुओं को भोजन, वस्त्र एवं आश्रय प्राप्त होता है समस्त जीव जन्तु मृदा में या मृदा पर उत्पन्न होते हैं और अपना जीवन चक्र पूरा करने के बाद मिट्टी में विलीन हो जाते हैं, इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मिट्टी हमारे समस्त जीवन का आधार तथा प्रकृति प्रदत्व एवं निःशुल्क उपहार है। इस पृथ्वी पर फसलोत्पादन हेतु मिट्टी एक आधार विकल्प के रूप में उपलब्ध है यदि मिट्टी स्वस्थ है तो फसलोत्पादन हेतु अच्छा होता है यदि मिट्टी स्वस्थ नहीं है, तो फसलोत्पादन हेतु मिट्टी की तैयारी के साथ–साथ प्रबन्धन की आवश्यकता भी पड़ती है। मानव का मिट्टी से सदियों का शास्वत सम्बन्ध रहा है, जब तक जीवन का अस्तित्व रहेगा मिट्टी के प्रबन्धन की आवश्यकता हमेशा रहेगी। जलवायु परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए रबी फसलों हेतु खेत की तैयारी एवं मृदा प्रबंधन अत्यन्त आवश्यक है। रबी फसलों की बुवाई का कार्य अक्टूबर–नवम्बर माह में प्रारम्भ हो जाता है।

रबी की प्रमुख फसलें

अन्न वाली फसले : इसके अन्तर्गत गेहूं, जौ, जई, मक्का आदि आते है।

दलहनी फसलें : इस वर्ग की फसलों के दानों में प्रोटीन की बाहुल्यता होती हैं जैसे– चना, मटर, मसूर, खेसारी आदि।

तिलहनी फसलें : इस वर्ग में वें फसले आती है जिनके बीजों से तेल प्राप्त होता है जैसे–सरसों, राई, अलसी, तोरिया, सूर्यमुखी आदि।

चारे वाली फसलें : चारे वाली फसलों के अन्तर्गत वे सभी फसलें आती है जिन्हें पशुओं को खिलाने के उद्देश्य से उगाया जाता है । जैसे– बरसीम, जई, मक्का आदि ।

जड़ तथा कन्द वाली फसलें : इसके अन्तर्गत वे फसले आती हैं जिनकी जड़ों व कन्दो का उपयोग किया जाता हैं। जैसे मूली, गाजर, आलू, शलजम, शकरकन्द आदि ।

सब्जियों वाल फसलें : इसके अर्न्तगत टमाटर, बैगन, भिन्डी, आलू, तोरिया, लौकी, करेला, सेम, बण्डा, फूलगोभी, पातगोभी, गाठगोभी, मूली, गाजर, शलजम, मटर, चुकन्दर, पालक, मेंथी, प्याज आदि फसलें आती है जिसका उपयोग सब्जियों के रुप में किया जाता है।

शर्करा वाली फसलें : इस वर्ग में वे फसलें आती हैं जिनके रस से चीनी तैयार किया जाता है, जैसे–चुकन्दर, गन्ना।

मसालें वाली फसलें : इन फसलों का उपयोग मसाला सब्जियों, अचार, चटनी आदि में स्वाद व सुगन्ध की वृद्धि हेतु किया जाता है। जैसे–जीरा, सौंफ, अजवाइन, मंगरैल, धनियाँ, लहसुन, मिर्च आदि ।

खेत की तैयारी

खेत की सफाई : खेत की तैयारी से पूर्व खेत की सफाई कर ली जाती है, इसके लिए पूर्व की फसल के अवशेषों को मुख्य खेत से हटा कर साफ कर लिया जाता है।

ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई : रबी फसलों के खेत की तैयारी गर्मी के समय मे ही प्रारम्भ कर दी जाती है इसके लिए मई–जून माह में खेत की गहरी जुताई कर लिया जाता है इसका फायदा यह होता है कि खेत में खरपतवार के बीज के साथ–साथ मिट्टी में पड़े कीड़ों के अण्डा, लारवा एवं आदि सूर्य की गर्मी से मर जाते हैं या चिड़ियों द्वारा खा लिए जाते हैं।

रबी फसलों हेतु मिट्टी का प्रकार

रबी फसलों की खेती विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में की जाती है। लेकिन क्ले लोम एवं दोमट मिट्टी अच्छी संरचना एवं मध्यम जल धारण क्षमता वाली मिट्टी गेहूं की खेती के लिए उपयुक्त मानी जाती है। मिट्टी का पी.एच. 6.5 से 7.5 के बीच होना चाहिए। भारी मिट्टी गेहूं की खेती के उपयुक्त नही मानी जाती है। हल्की मिट्टी जहां सिंचाई की सुविधा के साथ–साथ जलधारण क्षमता अच्छी हो उस पर रबी फसलों की खेती की जा सकती है।

भारत में रबी फसलों की खेती के प्रमुख क्षेत्र जैसे

1. उत्तर प्रदेश एव बिहार का गंगा किनारे का जलोढ़ क्षेत्र
2. पंजाब एवं हरियाणा का जलोढ क्षेत्र
3. महाराष्ट्र एवं कर्नाटक का काली मिट्टी वाला क्षेत्र
4. हिमालय के पहाड़ी क्षेत्र
5. राजस्थान का डेजर्ट क्षेत्र ।

रबी फसलों की खेती के लिए तापक्रम 21–25 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त माना जाता है। खेती की तैयारी के लिए दो बार गहरी जुताई इसके बाद डिस्क की सहायता से 2–3 कम गहरी जुताई की जानी चाहिए। फसल की बुवाई से पूर्व करीब 7–10 दिन हल्की सिंचाई कर दी जाती है जिससे नमी बराबर रहे और रबी फसलों के बीज का अंकुरण अच्छा हो सके ।यदि खेत की तैयारी में देरी होती है तो फसल की बुवाई में भी देर हो जाती है और फसलोत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। रबी फसलों को

सफेद चीटी एवं गुजिया वीवील से बचाव के लिए एल्ड्रिन 5 प्रतिशत की दर से या 25 किलोग्राम डस्ट प्रति हेक्टेयर की दर से से अन्तिम जुताई के समय खेत में मिला दिया जाता है। खेत की जुताई कम से कम तीन से चार बार अवश्य करना चाहिए। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाल हल से और बाद में डिस्क हैरो या देशी हल से खेत की जुताई करनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगाना चाहिए क्योंकि पाटा लगाने से मिट्टी मुलायम तथा भुरभुरी हो जाती है साथ ही साथ नमी का संरक्षण अधिक होता है जो बीज में अंकुरण के लिए उपयोगी सिद्ध होता है। बुवाई से पूर्व बीज के अंकुरण क्षमता की जांच अवश्य कर लेनी चाहिए, बीज का उपचार विटावेक्स या वाविस्टीन की 2 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से अवश्य उपचारित करना चाहिए जिससे रोग व्याधि पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

खाद एवं उर्वरक प्रबन्धन

किसान भाइयों को अधिक उत्पादन के लिए रबी की फसलों में 6–8 टन कार्बनिक खाद एवं उर्वरकों की सस्तुत मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। असिंचित दशा में खाद एवं उर्वरक की पूरी मात्रा उपयुक्त उर्वरकों के द्वारा बुवाई से पूर्व अन्तिम जुताई के समय देनी चाहिए। सिंचित दशा में रबी की फसलों में नाइट्रोजन की आधी मात्रा एवं फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय प्रयोग करना चाहिए। शेष बची हुई नाइट्रोजन की मात्रा प्रथम सिंचाई एवं दो से तीन बार थोडी–थोडी मात्रा में देना चाहिए।

किसान भाइयों को रबी फसलों की खेत की तैयारी के बाद सबसे महत्वपूर्ण क्रिया है मृदा स्वास्थ्य एवं उर्वरक प्रबंधन इसके लिए सबसे आवश्यक है कि मिट्टी की जांच करायी जाए।

मिट्टी की जांच क्यों और कैसे?

मृदा परीक्षण एक रासायनिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मिट्टी में उपस्थित पोषक तत्वों की मात्रा का निर्धारण किया जाता है। इस विधि से पोषक तत्वों की आवश्यकता फसल बुवाई से पूर्व ही ज्ञात की जाती है जिसके आधार पर आवश्यक उर्वरकों की पूत समयानुसार की जा सके।

मृदा परीक्षण का उद्देश्य

- मिट्टी में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा का निर्धारण।
- फसल की आवश्यकता के अनुसार पोषक तत्वों की कमी का पता लगाकर किसानों को सूचित करना।
- पोषक तत्वों की उपलब्धता के आधार पर पोषक तत्वों की संस्तुति।
- मिट्टी की विशिष्ट दशा का निर्धारण जैसे–अम्लीय, क्षारीय आदि एवं सुधारकों का प्रयोग ।

वर्तमान समय में रासायनिक खादों के असन्तुलित प्रयोग से हमारी खेती योग्य मिट्टी तथा वातावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। किसान भाइयों द्वारा प्रायः असन्तुलित एवं अशुद्ध उर्वरकों का प्रयोग खेतो में किया जा रहा है जिससे मिट्टी की उर्वरा शक्ति कमजोर होती जा रही है साथ ही साथ मिट्टी में जीवांश पदार्थ एवं सूक्ष्म जीवों की संख्या मे भी लगातार कमी होती जा रही है। इसके कारण पौधों की वृद्वि एवं फसलोत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है। इसके लिए किसान भाइयों अपने खेत की मिट्टी जांच अवश्य कराये तथा आवश्यक उर्वरक का सन्तुलित मात्रा में प्रयोग करें।

मिट्टी की जांच का पहला सबसे महत्वपूर्ण अंग है मिट्टी का नमूना प्राप्त करना

मृदा नमूना एकत्र करने की विधि

- सबसे पहले खेत में 10–15 स्थानों को टेढ़े–मेढ़े तरीके से इस प्रकार से चिन्हत करते हैं कि जो पूरे खेत का प्रतिनिधित्व करें।
- चिन्हित स्थान को पहले साफ करते हैं ताकि उसके ऊपर उपस्थित घास–फूस एवं अन्य वनस्पतियों मिट्टी के नमूने को प्रभावित न करें। अब अंग्रेजी के V आकार का 15 सेमी. गहरा गड्ढा खुरपी की सहायता से खोदते हैं।
- गड्ढे के टेढ़े वाले भाग में बाये हाथ को लगाते हैं और दाहिने हाथ से खुरपी को पकड़कर सीधे वाले किनारे से 2 सेमी. पतली परत ऊपर से नीचे तक निकालकर साफ बाल्टी या पॉलीथीन थैली में रख लेते हैं। यह क्रिया प्रत्येक चिन्हित स्थान पर करते हैं जिस स्थान पर हमें कुछ दूसरे तरह की मिट्टी दिखाई देती है उसका नमूना अलग से लेते हैं।
- ऊसर भूमि जहां पर होती है वहां सतह पर लवणों की पपड़ी जमा होती है। ऐसे भूमि से पहले पपड़ी युक्त पाउडर का नमूना अलग थैले में इकट्ठा कर लेते हैं और पुनः पूर्ववत विधि की तरह 15 सेमी. की गहराई से नमूना एकत्र करके अलग साफ थैले में रख लेते हैं। फिर इसे पोषक तत्व एवं लवणों की जांच हेतु प्रयोगशाला में पहुंचाते हैं।
- यदि फलों का बगीचा लगाना है तो नमूने की गहराई 100 सेमी. रखते हैं।
- प्रत्येक स्थान से एकत्रित मिट्टी साफ पॉलीथीन या प्लास्टिक के बाल्टी में अच्छी तरह से मिलाते हैं और उसमें उपस्थित कंकड़–पत्थर को हटा देते हैं।
- फिर इस मिट्टी को एक पेपर पर रखकर चार भागों में बांट देते हैं और आमने–सामने के भाग को छोड़ कर दोनों बगल की मिट्टी को फेंक देते हैं और यह क्रिया तब तक दोहराते हैं जब तक की 500 ग्राम मिट्टी न बच जाए।
- मृदा नमूने को छाया में सुखाते हैं तथा लकड़ी के बेलन से मिट्टी को पीस लेते हैं और उसे चलनी की सहायता से छान लेते हैं।
- मृदा नमूने को कपड़े या पॉलीथीन के थैले में भरकर निम्न जानकारी वाले टैग के साथ पैक कर देते हैं। थैले में दी जाने वाली जानकारियां निम्नानुसार है–
- कृषक का नाम
- पत्राचार का पता
- खेत का खसरा या प्लाट नम्बर
- खेत का लोकल नाम या पहचान
- पूर्व में ली गई फसल
- आगे ली जानी वाली फसल
- खेत की मिट्टी में यदि कोई समस्या हो तो उसका वर्णन
- उपलब्ध सिंचाई का साधन
- पूर्व में प्रयोग की गई उर्वरक की मात्रा
- नमूना लेने की गहराई एवं तिथि

मिट्टी के नमूना एकत्र करते समय ध्यान देने योग्य बातें

- खड़ी फसल से नमूना नहीं लेना चाहिए फसल कटने के पश्चात् ही नमूना लेना चाहिए।

- खेत के मेड़ से लगभग 1 .5 मीटर की दूरी को छोड़कर नमूना लेना चाहिए।
- खाद के ढेर एवं गड्ढे के समीप से नमूना एकत्र नहीं करना चाहिए।
- नमूने को खाद या नमक के बैग में एकत्र नहीं करना चाहिए और न ही सुखाना चाहिए ।
- छायादार स्थान, पेड़ के पास, सिंचाई की नाली एवं चारदीवारी के पास से नमूना नहीं लेना चाहिए।

मिट्टी के नमूने की जांच के बाद संस्तुत उर्वरकों का प्रयोग के साथ–साथ जैव उर्वरकों का भी प्रयोग किया जाता है। इसलिए हम सभी इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि रबी फसलों में मिट्टी के प्रबंधन कैसे स्थापित करके अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। किसान भाई खरीफ फसल की कटाई के बाद मिट्टी का नमूना लेकर अपने नजदीकी कृषि केन्द्रों के मृदा परीक्षण प्रयोगशाला में भेज दें। मृदा परिक्षण से यह पता लग जाता है हम जिस रबी फसल की खेती करना चाह रहे है। उसकी पोषक तत्व की उपलब्धता क्या है और किन पोषक तत्वों की कमी है साथ ही साथ हमें मिट्टी की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशा का भी ज्ञान हो जाता है। इस प्रकार हम लोग रबी फसलों में संतुलित उर्वरक का प्रयोग कर मिट्टी के स्वास्थ को अच्छा बना सकते हैं।

मृदा पी.एच. मान

मिट्टी को अम्लीय, क्षारीय एवं उदासीन पीएच मान के आधार पर तीन भागों में बांटा गया है। मृदा पी.एच. फसलों द्वारा मृदा से पोषक तत्वों एवं पानी के अवशोषण के साथ–साथ मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता को प्रभावित करता है। सामान्य रूप से रबी फसलों के लिए उपयुक्त पी.एच. 6.5 से 7.5 के बीच अच्छा माना जाता है, विभिन्न प्रकार की मिट्टियों का पी.एच. मान अलग–अलग होता है उसी प्रकार फसलों की पी.एच. की आवश्यकताएं अलग अलग होती है।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन

फसलों में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन, सन्तुलित मात्रा में खाद एवं उर्वरकों के प्रयोग करने की वह आधुनिक प्रक्रिया है, जिसमें मृदा परीक्षण के आधार पर फसल के पोषक तत्व की आवश्यकता को पूरा करने के लिए रासायनिक उर्वरकों के साथ–साथ स्थानीय स्तर पर कम खर्च में उपलब्ध कार्बनिक खाद एवं जैविक खाद का प्रयोग इस अनुपात में किया जाता है कि फसल उत्पादन अधिक लाभप्रद एवं टिकाऊ हो। इसके साथ–साथ पर्यावरण एवं मृदा स्वास्थ्य पर को बुरा प्रभाव न पड़े।

जैव उर्वरक का प्रयोग

जैव उर्वरक फसलों को पोषक तत्व प्रदान करने वाला सस्ता एवं सक्षम नवीनतम स्रोत है। जैव उर्वरक लाभकारी जीवाणुओं के वह उत्पाद हैं जो मिट्टी व हवा से पौधों के लिए मुख्य तत्वों का दोहन कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं । जीवाणु खाद वास्तव में जीवाणु कल्चर है जो भूमि की दशा में सुधार के साथ–साथ कृषि उत्पाद की गुणवत्ता को बढ़ाते हैं। वायुमण्डलीय हवा में लगभग 80000 टन नाइट्रोजन प्रति हे. पायी जाती है, जो कुल वायुमण्डल का 79 प्रतिशत है, जिसे कोई पौधा सीधे ग्रहण नहीं कर पाता है। किन्तु इस भण्डार का प्रयोग मिट्टी के सहजीवी एवं असहजीवी जीवाणुओं की सहायता से कुछ सीमा तक किया जा सकता है। मिट्टी में इन जीवाणुओं की आपूर्ति जैव उर्वरक के द्वारा की जाती है। इसके अलावा मिट्टी में अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील अवस्था में लाकर पौधों को उपलब्ध कराने का कार्य जैव उर्वरक के प्रयोग से किया जा सकता है।

हरी खादों का उपयोग

मृदा उर्वरता को बढ़ाने का सबसे अच्छा एवं सस्ता उपाय हरी खादों का उपयोग है। हरी खाद कार्बनिक खादें है, जिनसे पौधों को पोषक तत्व तो कम लेकिन कार्बनिक पदार्थ अधिक मात्रा में प्राप्त होता हैं। हरी खाद के लिए मुख्यतया दलहनी कुल की फसलों को उगाया जाता है एवं एक निश्चित समय पर जुताई करके मृदा में दबा दिया जाता है। हरी खाद के लिए ढ़ैंचा की फसल सर्वोतम रहती है क्योंकि इसे सभी प्रकार की जलवायु व मृदाओं में आसानी से उगाया जा सकता है। रबी फसल की कटाई एवं खरीफ फसल की बुवाई के बीच का समय हरी खाद के लिए सर्वोतम रहता है क्योंकि इस दौरान सामान्यतया खेत खाली रहता है। ढ़ैंचा की हरी खाद लेने के लिए प्रति हेक्टेयर क्षेत्रफल में 20–30 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। फसल बुवाई के लिए खेत की एक बार जुताई करके बीज को छिड़ककर मृदा में मिला देना चाहिए। अच्छे अंकुरण के लिए बुवाई के समय मृदा में उचित नमी का होना आवश्यक होता है। फसल जब 45 दिन या 4–5 फिट ऊंचा हो या जो भी पहले हो होने पर हैरो से जुताई करके सड़ने के लिए मृदा में दबा देना चाहिए। 45 दिन की अवस्था में ढ़ैंचा की फसल से 10–15 टन जैव पदार्थ प्रति हेक्टेयर क्षेत्रफल में मिलता है। ढ़ैंचा में शुष्क भार के आधार पर लगभग 3.5 प्रतिशत नत्रजन, 0.6 प्रतिशत फास्फोरस एवं 1.2 प्रतिशत पोटाश होता है। 45 दिनों की ढ़ैंचा फसल में लगभग 15 प्रतिशत शुष्क पदार्थ होता है इस प्रकार ढ़ैंचा को हरी खाद के रूप में उगाने से प्रति हेक्टेयर क्षेत्रफल में 50–80 किलोग्राम नाइट्रोजन, 10–15 किलोग्राम फास्फोरस तथा 20–30 किलोग्राम पोटाश प्रदान किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त हरी खाद से मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि होती है जिससे मृदा की भौतिक दशाओं मुख्यतया: संरचना एवं जल धारण क्षमता, जैविक एवं रासायनिक दशाओं में सुधार होता है। हरी खाद से मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा में भी वृद्धि होती है, वायु संचार बढ़ता है, मृदा तापमान में संतुलन आता है, लाभदायक जीवाणुओं की संख्या बढ़ती है एवं खरपतवारों की समस्या में कमी आती है। इस प्रकार हरी खाद को उगाने से फसलों के उत्पादन लागत को कम करके आर्थिक लाभ को बढ़ाया जा सकता है।

कार्बनिक खादों एवं जैव उर्वरकों के प्रयोग से मिट्टी में निम्नलिखित परिवर्तन होते हैं

- मिट्टी का रंग गाढ़ा हो जाता है।
- भौतिक दशा में सुधार होता है एवं उत्पादन बढ़ जाता है।
- मिट्टी के कणों को आपस में बाधने की क्षमता बढ़ती है जिससे मिट्टी का कटाव रूक जाता है ।
- मिट्टी की पानी सोखने की क्षमता बढ़ जाती है।
- मिट्टी का स्थूल घनत्व घट जाता है
- क्षारीय भूमि का सुधार होता है।
- मिट्टी में उपस्थित सूक्ष्म जीवों को प्रर्याप्त मात्रा में भोज्य मिलने के कारण सूक्ष्म जीवों की जनसंख्या एवं क्रियाशीलता में वृद्धि होती है।

आलू में मृदा व कन्द जनित रोगों का प्रबंधन

डी.एल. यादव, प्रतिक जैसानी, जे के पटेल एवं शिखा शर्मा
कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज, कोटा, आलू अनुसंधान केंद्र डीसा, गुजरात एवं आंचलिक कृषि अनुसंधान केंद्र, छिंदवाड़ा, मध्य प्रदेश

आलू फसल की कुछ बीमारियाँ ऐसी हैं जिनके जीवाणु मिट्टी में काफी लंबे समय तक जीवित रहते हैं। यह जीवाणु कन्द को नुकसान पहुंचाते हैं तथा ऐसे रोगग्रस्त कन्दों के द्वारा ये बीमारियाँ अन्य क्षेत्रों व रोग मुक्त खेतों में चली जाती हैं। इसलिए इन्हें मृदा व कन्द जनित रोग कहते हैं। सामान्यतः इन रोगों से प्रभावित कन्द भंडारण में सड़ जाते हैं। इनमें से प्रमुख रोगों और उनके प्रबंधन पर यहाँ संक्षेप में चर्चा की गई है।

फयूजेरियम

कवक जनित इस बीमारी द्वारा संक्रमित कंद इस बीमारी के प्रसार व मिट्टी में संक्रमण का मुख्य स्रोत हैं। इसके अलावा यह बीमारी दूषित मिट्टी, खेत की जुताई के उपकरणों, हवा और सिंचाई के पानी आदि के माध्यम से भी एक स्थान से दूसरे स्थान तक फैलती है। सामान्यतः ये रोगकारक, कन्दों की स्वस्थ त्वचा को संक्रमित नहीं कर पाते हैं किन्तु आलू की खुदाई, परिवहन और भंडारण के समय त्वचा पर आई खरोंचों या घावों से इस रोग का संक्रमण होता है।

शुष्क गलन

प्रारंभिक लक्षण कंद की सतह पर छोटे भूरे घावों के रूप में दिखाई देते हैं। ये घाव बढ़ कर धँसे हुए व झुर्रीदार दिखाई देते हैं। बाद में झुर्रीदार सतह के नीचे घाव खोखला होने लगता है तथा इसमें सफेद, गुलाबी या गहरे भूरे रंग की कवक विकसित हो जाती है। सड़े हुए कंद सूख कर सिकुड़ जाते हैं और ममीकृत भी हो सकते है।

रोग प्रबंधन

शुष्क गलन बीमारी के रोगजनक कन्दों में कुछ स्तर पर हमेशा मौजूद रहते हैं तथा अनुकूल परिस्थिति होते ही ये कन्दों को रोगग्रस्त कर देते हैं। वर्तमान में यह सुनिश्चित करना कि बीज आलू इस रोग से पूर्णतः मुक्त है, संभव नहीं है। अतः इस रोग को रोकने के लिए निम्नलिखित क्रियाओं का अनुपालन करें।

- हमेशा रोग मुक्त अथवा प्रमाणित बीज कंदों का ही प्रयोग करें।
- बीज कंद प्राप्त करने से पहले भंडार गृह/स्थल को अच्छी तरह से साफ और कीटाणु रहित कर लें।
- भंडारण/शीत भंडारण से पहले कन्दों को 3% बोरिक एसिड से उपचारित करें (30 मिनट के लिए कन्दों को डुबोएँ अथवा स्प्रे करें) व छाया में अच्छी तरह सूखा लें।
- समय–समय पर भंडारित कन्दों का निरीक्षण करते रहें व रोगग्रस्त कन्दों को बाहर निकाल दें।
- अधिकांशतः बीजाई के समय पूरे कंदों को ही लगाएं। यदि कटे हुए बीज कंद का उपयोग किया जाता है, तो बीज को फफूंदनाशक से उपचरित करें (कटे हुए कन्दों को 10 मिनट के लिए मैन्कोजेब 0.25% घोल में डुबोएँ) व बोने से पहले छाया में सुखा लें ताकि बीज व अंकुरण में सड़न ना हो।
- बीज काटने में उपयुक्त चाकू/उपकरण तेज धार हों ताकि कन्द समतल कटें (समतल कटे कन्दों के घाव जल्दी भर जाते हैं)।
- सुनिश्चित करें कि जुताई उपकरणों, सिंचाई के पानी आदि के माध्यम से एक खेत से दूसरे खेत की मिट्टी प्रदूषित/संक्रमित ना हो।
- मिट्टी में रोगजनक की मात्रा कम करने के लिए 2 से 3 वर्ष का फसल चक्र अपनाएँ व साथ ही स्वयं उगने वाले आलुओं को उखाड़ कर नष्ट कर दें।
- बेलें काटने के लगभग 10–12 दिन बाद ही आलू कि खुदाई करें ताकि आलू की त्वचा मिट्टी के अंदर ही पूरी तरह पक जाए। शुष्क गलन से बचाने के लिए सुनिश्चित करें कि आलू की खुदाई व ढुलाई के दौरान कन्दों पर जख्म या खरोंचें ना आयें।
- शीत भंडार में रखने से पहले बीज आलुओं को दो से तीन सप्ताह तक छाया और मध्यम आर्द्रता के तहत
- 13 से 18°C तापमान पर संग्रहीत करें ताकि खुदाई व ढुलाई के दौरान आई खरोंचें ठीक हो जायें।
- मई व जून के महीने में 20 दिन के अंतराल पर दो बार खेत की गहरी जुताई कर मिट्टी को उच्च तापमान के संपर्क में रहने दें। ऐसा करने से मिट्टी में पनपने वाले बहुत से रोगकारक नष्ट हो जाते हैं।

काली रूसी

यह रोग भंडारण के दौरान आलू की आँख व अंकुरों को नष्ट करता है, खेत में अंकुरण के दौरान या बाद में तने को नुकसान पहुंचाता है और प्रजन्य कंदों पर काली रूसी (कवक की दृढ़ काली अनियमित गांठें) बनाता है। काली रूसी कन्दों की गुणवत्ता को प्रभावित करती है जिससे उनका बाजार मूल्य कम हो जाता है। इस रोग से जमीनी सतह के पास तने पर लाल भूरे रंग के घाव विकसित होते हैं जो अक्सर उन्हें घेर लेते हैं। तनों के आंशिक या पूर्ण रूप से घिसने के परिणामस्वरूप पौधे की सबसे ऊपर की पत्तियाँ छोटी, बैंगनी रंग की व मुड़ जाती हैं। तने पर हुए घाव की वजह से कन्द अकसर जमीन से ऊपर तने पर बन जाते हैं। भारत सहित दुनिया के अधिकांश आलू उगाने वाले क्षेत्रों में यह बीमारी प्रचलित है। ये बीमारी एक कवक रोगजनक राईजोक्टोनिया सोलनी के कारण होती है। यह रोगजनक, मिट्टी और बीज जनित दोनों है लेकिन

बीमारी मुख्य रूप से काली रूसी ग्रस्त बीज कंद के माध्यम से नए क्षेत्रों में फैलती है। मृदा जनित संक्रमण पौधों में देर से उभरता है क्योंकि कवक को आलू के संपर्क में आने के लिए कुछ समय की आवश्यकता होती है। कन्दों पर काली रूसी का विकास साधारणतः बेलों की कटाई व फसल की खुदाई के बीच की अवधि में होता है। देर से खुदे कन्दों पर काली रूसी का प्रकोप अधिक दिखता है।

रोग प्रबंधन

- काली रूसी से मुक्त स्वस्थ बीज कंद का उपयोग करना, भंडारण से पहले 3% बोरिक एसिड (30 मिनट के लिए कन्दों को डुबोएँ अथवा स्प्रे करें व छाया में सूखा लें) से बीज कन्द का उपचार करना, अपेक्षाकृत सूखी और गर्म मिट्टी में बीजाई करना (ताकि अंकुरण शीघ्र हो और कवक को हमले के लिए कम अवसर मिले), अनाज व फलीदार फसलों के साथ दो से चार साल का फसल चक्र अपनाना, ग्रीष्मकाल में 20 दिन के अंतराल पर खेत की दो बार गहरी जुताई कर मिट्टी को उच्च तापमान के संपर्क में रखना इत्यादि क्रियाएँ इस रोग के नियंत्रण के लिए बहुत प्रभावी पाई गई हैं।
- जैव नियंत्रक जैसे ट्राइकोडर्मा वायराइड, ट्राइकोडर्मा हर्जियानम आदि को बीमारी के नियंत्रण के लिए प्रभावी पाया गया है।

साधारण खुरण्ड या स्कैब

यह रोग कन्दों की सतह पर खुरदरी परत बनाता है जिससे कन्द भद्दे दिखते हैं। इस बीमारी से उपज प्रभावित नहीं होती है किन्तु भद्दे दिखने के कारण ऐसे कन्दों की कीमत बाजार में कम मिलती है। इसके अतिरिक्त यदि रोगग्रस्त कन्द 5 प्रतिशत से अधिक हों तो इनका बीज प्रमाणीकरण खारिज कर दिया जाता है, जिससे बीज उद्योग को भारी नुकसान होता है। स्कैब या खुरंड आलू के कंद की सतह पर छोटे लाल या भूरे रंग के धब्बे के रूप में शुरू होता है और इसका संक्रमण कन्द बनने की आरम्भिक अवधि के दौरान होता है। संक्रमण मुख्य रूप से वातरंध्रों के माध्यम से होता है और आसपास के परित्वक संक्रमित कोशिकाओं के बढ़ाव और विभाजन के कारण भूरे और खुरदरे हो जाते हैं। कन्द बनने की आरम्भिक अवस्था

इस रोग के लिए अति संवेदनशील है। स्ट्रेप्टोमाइसिस वातरंध्रों के द्वारा संक्रमण करते हैं किन्तु जब परित्वक विभेदित हो जाते है तो कंद रोगजनक के लिए संवेदनशील नहीं रहते हैं। रोगज़नक़, मिट्टी व बीज जनित दोनों है तथा पौधे के मलबे और संक्रमित मिट्टी में कई वर्षों तक जीवित रह सकता है। मिट्टी की स्थिति रोगजनक को बहुत प्रभावित करती है। मिट्टी की पी.एच. 5.0 से 8.0 के बीच या अधिक, 20 से 30° तापमान और मिट्टी की कम नमी इस रोग के लिए अत्यंत अनुकूल हैं। अतः कन्द बनने की प्रक्रिया शुरू होने के बाद 3 से 4 सप्ताह तक मिट्टी की नमी उच्च बनाए रखना इस रोग को कम करने में मदद करता है।

रोग प्रबंधन

बीज कंदों और मिट्टी, दोनों पर लंबे समय तक जीवित रहने के कारण रोगजनक को मिटाना मुश्किल है। इसलिए, रोगजनक को कम करने और फैलने से रोकने के लिए तथा बीमारी के विकास के लिए प्रतिकूल स्थिति पैदा करने के लिए निम्नलिखित क्रियाओं का पालन करें:

- हमेशा रोग मुक्त बीज कंदों का ही प्रयोग करें।
- बोरिक एसिड (3%) के साथ कंद उपचार करें (केवल बीज उद्देश्य के लिए) और शीत भंडारण से पहले छाया में सूखा लें।
- कंद प्रक्रिया शुरू होने पर खेत में बराबर नमी बनाए रखें। इसके लिए बार–बार मगर हल्की सिंचाई करें जब तक कि कंद का व्यास 1 सेंटीमीटर या अधिक माप का न हो जाए।
- गेहूं, मटर, जई, जौ, सोयाबीन, ज्वार, बाजरा आदि के साथ 3 से 4 वर्ष फसल चक्र अपनाएं और बीमारी को रोकने के लिए हरी खाद का प्रयोग करें। मई व जून के महीने में 20 दिन के अंतराल पर दो बार खेत की गहरी जुताई कर मिट्टी को उच्च तापमान के संपर्क में रहने दें।

मृदु गलन

आलू की खुदाई, परिवहन व भंडारण के दौरान मृदु गलन रोग कन्दों को काफी नुकसान पहुंचा सकता है। कन्दों के खराब रख–रखाब, परिवहन व भंडार गृह के हवादार न होने की स्थिति में नुकसान 100 प्रतिशत तक हो सकता है। मृदु गलन वाले जीवाणु आमतौर पर उन कंदों को संक्रमित करते हैं जो खुदाई, परिवहन और छंटाई के दौरान लगी चोट से या अन्य कंद जनित रोगजनकों की उपस्थिति में क्षतिग्रस्त हो गए हों। कंदों पर, यह रोग छोटे नरम पिलपिले घावों के रूप में दिखाई देता है जो उच्च आर्द्रता के तहत बढ़ते हैं। घाव के चारों ओर भूरे से काले रंग का रंग विकसित

हो सकता है। प्रभावित कंद चिपचिपे और दुर्गंधयुक्त हो जाते हैं और उनसे भूरे रंग का तरल निकलता है। कंद की त्वचा बरकरार रहती है और कभी–कभी गैस बनने के कारण सड़े हुए कंद फूल जाते हैं। यह रोग, फसल की पैदावार के दौरान कभी भी फसल को प्रभावित कर सकता है लेकिन खराब भंडारण/परिवहन की स्थिति में खासकर गर्म व आर्द्र जलवायु में कंदों को अधिक नुकसान होता है।

रोग प्रबंधन

क्योंकि यह रोग बीज और मिट्टी जनित है अतः पूर्ण नियंत्रण पाना मुश्किल है, फिर भी निम्नलिखित पर्यावरण–अनुकूल साधनों का उपयोग करके निश्चित रूप से आर्थिक नुकसान कम किए जा सकते हैं।

- स्वस्थ बीज का उपयोग लगभग 80% तक मुर्झान की समस्या को कम कर सकता है। इसलिए कोशिश करें कि बीज हमेशा उन क्षेत्रों से प्राप्त करें जो इस रोग से मुक्त हों।
- बीज को काटकर नहीं लगाना चाहिए, क्योंकि बीज काटकर लगाने से अगर बीज ग्रसित होगा, तो जिस चाकू या छुरी से बीज काटा गया है उस से भी रोग अन्य स्वस्थ कन्दों में फैल सकता है।
- अगर खेत पहले से ही ग्रसित हैं तो रोग के प्रभाव को कम करने के लिए उचित फसल चक्र का पालन करें। मक्का, अनाज, लहसुन, प्याज, गोभी आदि फसलों का उपयोग करके 2–3 वर्षीय फसल चक्र अपनाएँ।
- आलू की फसल के साथ कभी भी बैंगन, टमाटर, अदरक, मिर्च, शिमला मिर्च आदि फसलों को फसल चक्र में न अपनाएँ।
- धान और गन्ना हालांकि रोगकारक के पोषी नहीं हैं, फिर भी वे रोगजनक के वाहक होनें के कारण बीमारी के प्रसार में योगदान करते हैं।
- बीजाई के पश्चात कम से कम कृषि क्रियाएँ करें: निराई–गुड़ाई के दौरान पूरी सावधानी बरतने के उपरान्त भी पौधों की जड़ें व डंठल चोट ग्रसित हो जाते हैं जहां से रोगकारक आसानी से पौधों को संक्रमित कर सकते हैं। अतः जितना सम्भव हो सके, निराई–गुड़ाई जैसी कृषि क्रियाएँ कम से कम करें। अधिक उचित यही होगा अगर बीजाई के दौरान ही मिट्टी चढ़ाने का कार्य भी पूरा कर लिया जाए।
- फसल खुदाई के बाद खेत में इस रोग के जीवाणु घासपात/खरपतवार (weeds) या मिट्टी में गहरी दबी ग्रसित जड़ों में जीवित रह सकते हैं। अतः सबसे पहले खेत से खरपतवारों तथा जड़ों व पत्तियों के अवशेषों को नष्ट करें।

❋❋❋

किसान कॉल सेन्टर
हेल्पलाईन 0744–2662700
कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एवं गुणवत्ता सुधार केन्द्र
(राष्ट्रीय कृषि विकास परियोजना)
प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

गुलदाउदी की उन्नत खेती

अशोक चौधरी, आशुतोष मिश्रा, राजेश चौधरी, मनीषा धायल एवं सुरेश कुमार जाट
जी. बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, एसकेएन कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर एवं कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

पुष्पीय पौधों में गुलदाउदी का विशिष्ट महत्व है। इसके पुष्प उस समय प्राप्त होते हैं जब अन्य पुष्प बहुत कम मात्रा में मिलते हैं। राजस्थान में इसकी खेती व्यावसायिक तौर पर सफलतापूर्वक की जाती है। इसके खुले फूलों का उपयोग मुख्य रूप से पूजा–अर्चना, माला, गजरा, वेणी व अन्य सजावटी कार्यो में किया जाता है। इसके अलावा गुलदाउदी का कटे फूलों, गमलों, फूल की क्यारियों व उद्यानों की शोभा बढ़ाने के लिये भी उपयोग किया जाता है। आजकल गुलदाउदी की उन्नत किस्में विभिन्न रंगों में उपलब्ध हैं, जो अधिक अवधि तक फूल देती हैं।

जलवायु एवं भूमि

यह एक लघु प्रकाश वांछित पौधा है जो शरद ऋतु में उगाया जाता है। ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतु में इसके पौधों का अच्छा विकास नहीं होता है। पुष्प कलिका निर्माण के लिए 10 डिग्री से 16 डिग्री तापमान उपयुक्त रहता है। गुलदाउदी को सभी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है परन्तु अधिक पुष्प उत्पादन हेतु अच्छे जल निकास वाली दोमट भूमि अथवा बलुई दोमट भूमि जिसमें जीवांश पदार्थ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो, सबसे अच्छी रहती है। पौधे के उचित विकास के लिए खुली धूप वाली जगह अधिक उपयुक्त रहती है।

उन्नत किस्में

गुलदाउदी में एकवर्षीय व बहुवर्षीय दोनों प्रकार की किस्में पाई जाती हैं।
एकवर्षीय किस्में : स्थानीय किस्में – सफेद, पीली व बहुरंगीय किस्में।
बहुवर्षीय किस्में :

क्र. सं.	किस्म का नाम	रंग	फूल आने का समय
1	वसन्तिका	पीला	दिसम्बर–जनवरी
2	मीरा	सफेद, पीला	अक्टूबर–नवम्बर
3	शारदा	पीला	नवम्बर–दिसम्बर
4	कुन्दन	पीला	अक्टूबर–नवम्बर
5	बीरबल साहनी	सफेद	अक्टूबर–नवम्बर
6	नानाको	पीला	नवम्बर–दिसम्बर
7	बग्गी	सफेद	नवम्बर–दिसम्बर
8	सलेक्शन 5	गुलाबी	नवम्बर–दिसम्बर
9	सलेक्शन 4	पीला	नवम्बर–दिसम्बर
10	रेडगोल्ड	लाल–पीला	नवम्बर–दिसम्बर
11	फ्लिर्ट	लाल	नवम्बर–दिसम्बर
12	श्यामल)	बैंगनी	नवम्बर–दिसम्बर
13	मेधामी	गुलाबी	सितम्बर–नवम्बर
14	गुल शाहिर	केसरिया	मध्य–नवम्बर

क्रमशः 1 से 7 में पुष्प का आकार 3.0 से.मी. के लगभग होता है जबकि क्रमशः 8–14 में पुष्प का आकार 4.5 से.मी. से 9.5 से.मी. तक होते हैं।

प्रवर्धन : एकवर्षीय गुलदाउदी बीजों द्वारा उगाई जाती है। इसके बीज नर्सरी में अक्टूबर माह में बोते हैं। बीज बोने के 4–5 सप्ताह बाद तैयार पौध की खेत में रोपाई की जाती है। इस विधि का उपयोग केवल खुले पुष्प की खेती करने हेतु करते हैं। बहुवर्षीय गुलदाउदी का प्रसारण दो प्रकार से किया जाता है।

कलम द्वारा

फूलों के खेती हेतु कलम विधि से तैयार पौधे लगाये जाते है क्योंकि इस विधि से तैयार पौधों में फूल बड़े आकार के आते हैं। इस विधि में शीर्षस्थ कलम पौधे के सीधे बढ़ने वाले कोमल तनों के ऊपरी भाग से 7 से.मी. लम्बाई का चयन कर लगाते हैं। प्रत्येक कलम से नीचे की खुली हुई पत्तियाँ हटा कर रेत की बनी क्यारियों में लगाते हैं तथा लगाने के तुरंत बाद पानी देते हैं। कलमों में शीघ्र जड़ फुटान के लिए सेरेडेक्स पाउडर या इन्डोल ब्यूटारिक एसिड़ वृद्धि नियंत्रक को 5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर कलमों के निचले सिरे को आधा मिनट तक डुबोकर क्यारी में लगावें। ये कलमें 15 से 20 दिन बाद खेत व गमलों में रोपाई के लायक हो जाती हैं। कलम लगाने का समय जून का अंतिम सप्ताह या जुलाई का प्रथम सप्ताह उपयुक्त रहता है।

अन्तः भूस्तरियों द्वारा

पुष्प उत्पादन समाप्ति के बाद पौधे को भूमि की सतह से कुछ भाग छोड़कर काट दिया जाता है एवं बाद में पौधों के चारों तरफ गुड़ाई करके एवं खाद डालकर सिंचाई कर दी जाती है। इन पौधों के कटे हुए भाग से कुछ समय बाद पौधों से अन्तःभूस्तरियाँ निकलती हैं जिनको अलग–अलग निकाल कर लगा दिया जाता है। इनमें से प्रत्येक अन्तःभूस्तरी नये पौधे को जन्म देती है। एक पौधे से लगभग 8 से 10 अन्तःभूस्तरियाँ निकलती हैं जिनको अन्यत्र लगा दिया जाता है। अन्तःभूस्तरियों को जून–जुलाई माह में तैयार खेत में रोपाई कर दी जाती है। इस विधि से तैयार पौधे खुले पुष्प उत्पादन व स्प्रे टाईप गुलदाऊदी के फूल उत्पादन हेतु उपयुक्त होते हैं।

भूमि की तैयारी

जिस खेत में गुलदाउदी की रोपाई करनी हो उसकी पहली जुताई ग्रीष्म ऋतु में मिट्टी पलटने वाले हल से करें फिर पाटा लगाकर तीन से चार जुताई देशी हल से कर मिट्टी को भुरभुरी बनालें। खेत को समतल कर सिंचाई की सुविधानुसार क्यारियाँ बना लेनी चाहिए। भूमि की आखिरी जुताई के समय 25–30 टन प्रति हैक्टर की दर से अच्छी सड़ी हुई

गोबर की खाद बिखेर कर भली भाँति मिला दें। पौध की रोपाई से पूर्व 100 किलो यूरिया, 500 किलो सुपर फॉस्फेट व 100 किलो म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति हैक्टर की दर से भूमि में मिला देवें। 100 किलो यूरिया को दो भागों में विभाजित कर रोपाई के चार सप्ताह व आठ सप्ताह बाद खड़ी फसल में देकर सिंचाई करें। दीमक का प्रकोप हो तो 25 किलो एण्डोसल्फान 4 प्रतिशत चूर्ण या क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण प्रति हैक्टर की दर से भूमि में मिलावें।

रोपाई

खेत में पौधों की रोपाई करते समय पौधे से पौधे एवं कतार से कतार की दूरी छोटे फूलों वाली किस्मों में 30 से.मी. तथा बड़े फूलों वाली किस्मों में 40 से.मी. रखें।

सिंचाई

वर्षा ऋतु में सिंचाई की आवश्यकता नहीं रहती है परन्तु लम्बे समय तक यदि वर्षा न हो तो सिंचाई कर देनी चाहिए। वर्षा के बाद कलियाँ बनते समय व फूल खिलते समय सिंचाई की अधिक आवश्यता होती है अतः सप्ताह में एक बार सिंचाई अवश्य कर देनी चाहिए।

निराई–गुड़ाई

खेत में खरपतवार नहीं पनपें इस हेतु समय–समय पर निराई–गुड़ाई करते रहना चाहिए।

स्टेकिंग

पौधे बड़े होने पर हवा से पौधों के गिरने का डर रहता है अतः पौधों की ऊँचाई के अनुसार लकड़ी का सहारा देना चाहिए।

पिन्चिंग

गुलदाउदी में चुटाई करना एक आवश्यक क्रिया है, इससे पौधे की लम्बाई बढ़ना रूक कर अधिक पार्श्व शाखाएँ निकलने लगती हैं जिससे पौधा झाड़ीनुमा आकार का हो जाता है एवं पुष्प की अधिक उपज प्राप्त होती है। पहली चुटाई 4 सप्ताह बाद व दूसरी 7 सप्ताह बाद करें।

कीट प्रबंध

सनफ्लावर लेस विंग बग

यह एक चमकदार पारदर्शी छोटा कीट है। यह कीट कोमल पत्तियाँ खाता है जिससे पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती है।

नियंत्रण हेतु मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. 1.5 मिलीलीटर या मिथाइल डिमेटान 25 ई.सी. 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।

मूलग्रंथि सूत्रकृमि रोग

इसके प्रकोप से फूल ज्यादा समय तक नहीं ठहर पाता है तथा फूलों की गठन भी घटिया हो जाती है।

नियंत्रण हेतु पौध तैयार करते समय कार्बोफ्यूरान 3 जी 6 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से डालें या पौधे बदलते समय 3 ग्राम प्रति गमले में 12 इंच की गहराई में दवा डालें।

फूलों की तुड़ाई एवं उपज

गुलदाउदी के पुष्पन के लिए दिन छोटा और रात लम्बी होना आवश्यक है। प्राकृतिक रूप से ऐसी स्थिति सितम्बर माह में शुरू होती है। पुष्पों के पूरे खिल जाने पर नियमित रूप से पुष्पों की तुड़ाई करते रहना चाहिए ताकि पौधे पर नई कलियाँ निरंतर आती रहें और अधिक उपज प्राप्त हो सके। प्रति हैक्टर 100–150 क्विंटल पुष्प की उपज प्राप्त होती है।

❋❋❋

फलदार पौधों में कीट प्रबंधन

जे. के. गुप्ता, आर. एन. शर्मा एवं उदयभान सिंह
कृषि महाविद्यालय भरतपुर, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

हमारे संतुलित आहार के लिए फल अत्यन्त आवश्यक है। फलों से मानव स्वास्थ्य के लिए आवश्यक खनिज लवण विटामिन्स, प्रोटीन,वसा एवं कार्बोहाइड्रेट की पूर्ति होती है। फलों के वृक्षों से अधिक उत्पादन लेने के लिये फलों में लगने वाले विभिन्न कीट एक सीमाकारी कारण है, जिससे फलों की उत्पादकता एवं उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पडता है। हमारे यहाँ पर लगने वाले प्रमुख फल,वृक्षों के हानिकारक कीट निम्न हैं।

1. **सिट्रस साइल्ला :** इस कीट की निम्फ अवस्था पत्तियों से रस चूसती हैं, जिससे नींबू वर्गीय पौधे कमजोर एवं पीले पड जाते हैं। फूल, लीफ बड एवं पत्तियाँ सूख एवं झड जाती हैं। फल बहुत कम एवं छोटे आकार के बनते हैं। जिस पर काली फफूँद भी बन जाती हैं। इस कीट के नियंत्रण के लिये समय पर कटाई छंगाई करनी चाहिये तथा डाईमेथाएट 30 ई.सी.1. 25 मि.ली./लीटर या इमीडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल 0.4 मिली/लीटर फरवरी–मार्च, मई–जून एवं अगस्त–सितम्बर में छिडकाव करना चाहिए।

2. **सिट्रस सफेद मक्खी :** यह कीट सफेद रंग की छोटी मक्खी होती है, जिसकी निम्फ एवं वयस्क दोनों अवस्था पत्तियों से रस चूसती हैं। जिससे पत्तियॉ सिकुड जाती हैं। जिससे नीबू वर्गीय फल–वृक्षों की पैदावार पर विपरीत असर पडता है, इसके नियंत्रण के लिए फल–वृक्षों की दूरी पर्याप्त रखें तथा बगीचें में पानी नहीं भरना चाहिये (जल निकास अच्छा होना चाहिए) रासायनिक कीटनाशी से सिट्रस साइल्ला की तरह नियंत्रण कर सकते हैं।

3. **कोटनी कशन स्केल :** ये स्केल कीट जो नींबू वर्गीय फल–वृक्षों में बहुत तेजी से पत्तियों शाखाओं में नुकसान करते हैं, जिससे पत्तियाँ, शाखायें पीली पडकर समय से पूर्व झड जाती हैं। इसका नियंत्रण भी सिट्रस साइल्ला की तरह ही करें।

4. **मिलीबग :** मिलीबग प्रमुख रुप से आम,नींबू,अमरुद आदि फल–वृक्षों में कोशिका का रस चूसकर पत्तियाँ, कोमल तने एवं शाखाओं को कमजोर बना देता है। इसके नियंत्रण के लिए बगीचे की साफ–सफाई, संक्रमित शाखा की कटाई तथा नष्ट करना, फल–वृक्षों के नीचे हल चलाना, जिससे इनकी कॉलोनी खत्म हो जावें तथा प्रोफेनोफॉस 50 प्रतिशत का 1.5 मिली/लीटर की दर से छिडकाव करें।

5. **नींबू की तितली :** नींबू की तितली की कैटरपिलर (लट) अवस्था ताजा पत्तियों तथा टर्मीनल शाखा को खाती है, बाद में सभी पत्तियों को खाना शुरु कर देती है। इसके नियंत्रण के लिए पौधशाला में हाथ से पकडकर नष्ठ करना, बी.टी. का 1 लीटर प्रति हैक्टेयर छिडकाव या नीम की निम्बोली का 5 प्रतिशत सत्व का छिडकाव अथवा फ्लूबेण्डामाइड 39.5 एस.सी. का 0.25 मिली/लीटर की दर से छिडकाव करें।

6. **लीफ माइनर :** यह कीट फल–वृक्षों की ताजा पत्तियों पर सुंरग बनाती हैं। जिससे पत्तियों में विकृति आ जाती है। पौधशाला में यह कीट ज्यादा आक्रमण करता है। जिसमें प्रकाश संष्लेशक पर विपरीत प्रभाव पडता है और उपज में कमी हो जाती है। इसके नियंत्रण के लिये फेनवेलेरेट 20 ई.सी. 0.5 मिली/लीटर या साइपरमेथीन 10 ई.सी. 1 मिली/लीटर या एमामेक्टीन बेन्जोएट 5 एस.सी. 0.4 ग्राम/लीटर की दर से छिडकाव करें या 5 प्रतिशत नीम की निम्बोली का सत्व का छिडकाव करें।

7. **छाला भक्षक लट :** विभिन्न फल–वृक्षों में यह कीट नुकसान पहुॅचाता है। जिसमें से अमरुद, अनार, आम जामुन, ऑवला आदि

में नुकसान पहुँचाता है। यह कीट मुख्य तने पर छाल के नीचे रेशमी सुरंग व फीते के आकार के वेव (जाली) बनाती हैं। लट तने पर छेद भी बना देती है। इस कीट द्वारा छाल को खाना से पौधों को भोजन की कमी आ जाती है। जिससे पौधों की बढवार रुक जाती है। फलस्वरुप पैदावार पर विपरीत असर पडता है। इसके नियंत्रण के लिए फरवरी–मार्च में कीटनाशी से भीगा हुआ रुई का फुआ छाल के नीचे छेद में घुसा देते हैं। किसी धातु की नौकदार वस्तु के द्वारा और बाहर से गोबर, मिटटी से ढक देते हैं। इस हेतु जाल हटाने के बाद क्लोरएन्ट्रीलीप्रोल 18.5 एस.सी. 0.25 मिली/लीटर की दर से छिडकाव करें। छेद में कार्बोफ्यूरान 3 जी. 5 ग्राम प्रति छेद की दर से अन्दर डालकर मिटटी से बन्द कर दें।

8. **फलों के रस चूसने वाले मोथ :** इस कीट के वयस्क नींबू, अंगूर, सेब, अनार आदि फलों से रस चूसते है, जिससे फफूँद एवं जीवाणु जनित बीमारीयाँ का संक्रमण हो जाता है। इसके नियंत्रण के लिये गिरे हुए फलों को गढडा खोदकर दबा देना, सूर्यास्त के बाद बगीचे में धुआँ करना, फलों पर कवर लगाना तथा कीटनाशी से नियंत्रण के लिए 1.25 ग्राम प्रति लीटर की दर से मेलाथीयोन 50 ई.सी. या डाईमेथोएट 30 ई.सी का फलों के पकाव के समय छिडकाव करना चाहिए।

9. **आम का होपर :** आम के फसल को इस कीट से अत्यधिक हानि होती है। इसका प्रकोप आम में बोर आने पर शुरु हो जाता है। जोकि लगभग फरवरी के मध्य में होता है। इस कीट के प्रौढ तथा शिशु कोमल पत्तियों, कोयलों तथा फूलों का रस चूसते हैं। जिससे पत्तियॉ पीली पड जाती हैं। फल सडने लगते हैं तथा फल कमजोर हो जाते हैं। इस कीट के नियंत्रण हेतु पुराने तथा घने पेडों की शाखाओं को काटकर दूर–दूर कर देना चाहिए। नये वृक्ष दूर–दूर लगायें, कीटों का आम के वृक्षों वर आक्रमण होने पर डाईमेथोएट 30 ई.सी. 20 मिली. या थायोमिथोक्साम 25 डब्ल्यू.जी. 0.4 ग्राम प्रति लीटर छिडकाव करना चाहिए।

10. **आम का साइल्ला :** इसके प्रकोप से मुलायम शाखाओं के सिरे तथा पत्तियों के कोष्ठों में हरी नुकिली पिटिकायें बनती हैं। अगस्त के महिने में ये कोमल भागों से रस चूसना शुरु करते हैं। रस चूसते समय एक प्रकार का विशाक्त पदार्थ निकलता है, जिससे कलियों में उत्तेजना पैदा होती है। फलस्वरुप छोटी–छोटी पिटिकायें बन जाती है। ग्रसित शाखाऐं सूख जाती है तथा इन पर फल नही के बराबर लगते हैं। इस कीट के नियंत्रण के लिए कीट से ग्रसित शाखओं तथा पिटिकायों में उपस्थित कीट के शिशु को एकत्रित करके जला देना चाहिए। तथा आम का होपर में उपयुक्त कीटनाशी का प्रयोग करना चाहिए।

11. **आम का तना छेदक :** यह कीट आम,बमरुद,अनार,शहतूत आदि फल वृक्षों पर आक्रमण करता है। इस कीट के प्रौढ़ तथा ग्रव दोनों ही अवस्था नुकसान पहुँचाती है। बीटल तने के अन्दर प्रवेश करके सुरंग बनाती है। इसके द्वारा बनाये गये छेद से विस्ठा तथा लकडी का बुरादा बाहर निकलता रहता है। ग्रसित टहनियों की पत्तियाँ सूखकर गिरने लगती है तथा बाद में टहनियॉ सूखकर गिर जाती है। अधिक प्रकोप होने पर पेड सूख जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए प्रकाश प्रपंच द्वारा प्रौढ कीटों को आकर्शित कर नष्ट किया जा सकता है। तनों की छाल तथा ग्रसित टहनियों को काटकर कीट सहित नश्ट कर देना चाहिये। पेट्रोल या मिटटी का तेल को पिचकारी से छेद के अन्दर डालकर मिटटी से बन्द कर देना चाहिये तथा बडे तने में स्थित छेद में पेराडाईक्लोरोबेन्जीन के कुछ दानों को छेद में डालकर मिटटी से बंद करके कीट का नियंत्रण किया जा सकता है।

12. **अनार की तितली :** यह कीटअनार, अमरुद, लोकाट, ऑवला, चींकू, सेब आदि फलों वृक्षों पर आक्रमण करती है। यह अनार का प्रमुख कीट है। इससे फसल को बहुत नुकसान पहुॅचता है। इस कीट की सूण्डी फलों में जहॉ से छेद करके घुसती है उसे अपनी विस्ठा से बन्द कर देती है। प्रवेश द्वारा से कभी–कभी पानी सा निकलता है। जिससे बदबू आती है। फलों में घाव हो जाने के कारण कवक तथा जीवाणुओं का प्रकोप हो जाता है। फलस्वरुप फल सड जाते हैं। इस प्रकार फल पकने से पूर्व ही सडकर गिर जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए फलों को कपडे या पॉलीथिन के थैलियों से ढक देना चाहिए। कीट ग्रसित फलों तथा गिरे फलों को नष्ट कर देना चाहिये एवं क्लोरएन्ट्रीलीप्रोल 18.5 एस.सी. 0.25 मिली/लीटर की दर से अथवा फ्लूबेंडामाइड 39.5 एस.सी. के 0.20 मिली/लीटर की दर से छिडकाव करें।

13. **बेर की फल मक्खी :** यह बेर का अत्यधिक हानि पहुॅचानें वाला कीट है। इस कीट के मैगटस तथा प्रौढ दोनों ही अवस्था हानि पहुॅचाती है। जब बेर पकने लगते है तो मादा मक्खी अण्डरा ेधक गडाकर फल के छिलके के नीचे अण्डे देती है। अण्डे से निकले मैगट्स गूदे को खाते हैं। इस प्रकार फल काने हो जाते हैं तथा खाने योग्य नही रहते हैं। इसके नियंत्रण हेत ग्रसित फलों को समय–समय पर एकत्रित कर नष्ट करें। जंगली बेर की झाडियों को बेर के बागान के पास नहीं उगने ग्राम/लीटर या क्लोरएन्ट्रीलीप्रोल 18.5 एस.सी. 0.25 मिली/लीटर या डाइमेथोएट 30 ई.सी. 1.25 मिलह/लीटर की दर से छिडकाव करें।

गिलोय : पोषण भी स्वास्थ भी

यामिनी टॉक, चिराग गौतम एवं विनोद कुमार यादव
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

गिलोय (*टीनोस्पोरा कार्डीफोलिया*) की एक बहुवर्षीय लता है। जिसे अमृता, गुडुची, छिन्नरुहा, चक्रांगी, आदि के नाम से भी जाना जाता है। सामान्यतः यह जंगलों, खेतों की मेड़ों, पहाड़ों की चट्टानों आदि स्थानों पर कुण्डलाकार चढ़ती पाई जाती है। यह जिस वृक्ष को यह अपना आधार बनाती है, उसके गुण भी इसमें समाहित रहते हैं। इस दृष्टि से नीम पर चढ़ी गिलोय को श्रेष्ठ औषधि माना जाता है। इसकी जड़ से जगह–जगह से निकलकर नीचे की ओर झूलती रहती हैं। चट्टानों अथवा खेतों की मेड़ों पर जड़ें जमीन में घुसकर अन्य लताओं को जन्म देती हैं। इसके पत्ते कोमल तथा पान के आकार के होते है, ग्रीष्म ऋतु में छोटे–छोटे पीले रंग के गुच्छों में फूल आते हैं जो मटर के दाने जैसे फल में परिर्वतित हो जाते है। इसके बीज सफेद, चिकने, कुछ टेढ़े, मिर्च के दानों के समान होते हैं तथा तरूण तने की छाल हरी, गूदेदार तथा स्थान–स्थान पर गांठ के समान उभार नुमा होती हैं। पहचान के लिए इसके क्वाथ में जब आयोडीन का घोल डाला जाता है तो यह गहरा नीला रंग देता है। जो कि स्टार्च की उपस्थिति का परिचायक है।

गिलोय में पाए जाने वाले मुख्य पोषक तत्व

गिलोय में गिलोइन नामक ग्लूकोसाइड और टीनोस्पोरिन, पामेरिन एवं टीनोस्पोरिक एसिड पाया जाता है तथा इसके तने में काफी मात्रा में एंटी–ऑक्सीडेंट पाए जाते हैं। इसके अलावा गिलोय में कॉपर, आयरन, फॉस्फोरस, जिंक, कैल्शियम और मैगनीज भी प्रचुर मात्रा में मिलते हैं।

गिलोय के औषधीय गुण

आयुर्वेदा अनुसार गिलोय की पत्तियां, जड़ें और तना तीनो ही भाग सेहत के लिए गुणकारी हैं किन्तु अधिकतर बीमारियों के इलाज में गिलोय के तने या डंठल का ही उपयोग होता है। यह बुखार, पीलिया, गठिया, डायबिटीज, कब्ज, एसिडिटी, अपच, मूत्र संबंधी एवं कैंसर जैसे रोगों आदि से आराम दिलाती है।

1. मधुमेह रोधक

गिलोय टाइप–2 डायबिटीज को नियंत्रित रखने में असरदार भूमिका निभाती है क्योकि यह हाइपोग्लाईसेमिक एजेंट की तरह काम करती है और गिलोय जूस इन्सुलिन का स्राव बढ़ाती है जिससे रक्त में शुगर का बढा हुआ स्तर कम हो जाता है। आधा चम्मच गिलोय चूर्ण को गर्म पानी के साथ दिन में दो बार खाना खाने के एक से डेढ़ घंटे बाद लें अथवा दो से तीन चम्मच गिलोय जूस (10–15 मिली) को एक कप पानी में मिलाकर सुबह खाली पेट सेवन करें।

2. ज्वर निवारक

गिलोय के एंटीपायरेटिक गुण के कारण इसके सेवन से पुराने से पुराने बुखार भी ठीक हो जाता है। इसी कारण से मलेरिया, डेंगू और स्वाइन फ्लू जैसे गंभीर रोगों में होने वाले बुखार से आराम दिलाने के लिए गिलोय के सेवन की सलाह दी जाती है। गुडूची काढ़ा में पिप्पली चूर्ण मिलाकर सेवन करने से बुखार की गंभीर स्थिति में लाभ होता है। बुखार के रोगी को आहार के रूप में गुडूची के पत्तों की सब्जी शाक बनाकर खानी चाहिए। बराबर मात्रा में गुडूची, नीम तथा आँवला से बने 25–50 मिली काढ़ा में मधु मिलाकर पीने से बुखार की गभीर स्थिति में लाभ होता है। वात विकार के कारण होने वाले बुखार के निवारण के लिए मुनक्का, गिलोय, गम्भारी, त्रायमाण तथा सारिवा से बने काढ़े में (20–30 मिली) गुड़ मिलाकर सेवन करे। डेंगू होने पर दो से तीन चम्मच गिलोय जूस को एक कप पानी में मिलाकर दिन में दो बार खाना खाने से एक–डेढ़ घंटे पहले लें। इससे डेंगू से जल्दी आराम मिलता है।

3. खांसी

गिलोय में एंटीएलर्जिक गुण होने के कारण यह खांसी से आराम दिलाती है। अगर कई दिनों से आपकी खांसी ठीक नहीं हो रही है तो दिन में दो बार खाने के बाद गिलोय का काढ़ा बनाकर शहद के साथ उसका सेवन करने से खांसी से आराम मिलता है।

4. गठिया

गिलोय में एंटी–आर्थराइटिक गुण के कारण यह गठिया रोग में आराम दिलाने में सहायक होती है। गठिया से आराम दिलाने में गिलोय जूस और गिलोय का काढ़ा दोनों ही उपयोगी हैं। दो से तीन चम्मच (10–15 मिली) गिलोय जूस को एक कप पानी में मिलाकर सुबह खाली पेट इसका सेवन करना चाहिए। इसके अलावा अगर आप काढ़े का सेवन कर रहे हैं तो गिलोय का काढ़ा बनाकर उसमें शहद मिलाएं और दिन में दो बार खाने के बाद इसका सेवन करने से जोडों के दर्द में फायदा मिलता है।

5. अपच

गिलोय का काढ़ा, पेट की पाचन संबंधी समस्याओं जैसे कि कब्ज, एसिडिटी या अपच के लिए बहुत फायदेमंद होता है। 10–20 मिली गिलोय रस को गुड के साथ सेवन करने से कब्ज में फायदा मिलता है। सोंठ, मोथा, अतीस तथा गिलोय का काढ़ा 20–30 मिली सुबह और शाम पीने से अपच एवं कब्ज की समस्या से राहत मिलती है। आधा से एक चम्मच गिलोय चूर्ण को गर्म पानी के साथ रात में सोने से पहले लेंनें कब्ज, अपच और एसिडिटी आदि पेट से जुड़ी समस्याओं से आराम मिलता है।

6. पीलिया

गिलोय के औषधीय गुण पीलिया से राहत दिलाने में बहुत मददगार हैं। गिलोय के ताजे पत्तों के रस के सेवन से पीलिया में होने वाले बुखार और दर्द से भी आराम मिलता है। गिलोय के 10–20 पत्तों को पीसकर एक गिलास छाछ में मिलाकर तथा छानकर सुबह के समय पीने से पीलिया में

राहत मिलती है। पुनर्नवा, नीम की छाल, पटोल के पत्ते, सोंठ, कटुकी, गिलोय, दारुहल्दी, हरड़ का काढ़ा 20 मिली सुबह और शाम पीने से पीलिया, हर प्रकार की सूजन, पेट के रोग, बगल में दर्द, सांस उखड़ना तथा खून की कमी में लाभ होता है।

7. कैंसर

कैंसर जैसे असाध्य रोग में गिलोय का प्रयोग बहुत लाभकारी है। गेहूँ के ज्वारे के साथ गिलोय का रस मिलाकर खाली पेट सेवन करने से ब्लड कैंसर में राहत मिलती है।

8. एनीमिया

शरीर में खून की कमी कई रोगो का कारण हैं जिनमें एनीमिया सबसे प्रमुख है। एनीमिया से पीड़ित महिलाओं के लिए गिलोय का रस काफी फायदेमंद है। गिलोय का रस को दो से तीन चम्मच (10–15 मिली) शहद या पानी के साथ दिन में दो बार खाने से पहले लें। गिलोय ज्यूस का सेवन शरीर में खून की कमी को दूर करती है।

9. टीबी रोग

गिलोय, टीबी की समस्याओं से निजात दिलाने में सहायक हैं। अश्वगंधा, गिलोय, शतावर, दशमूल, बलामूल, अडूसा, पोहकरमूल तथा अतीस का 20–30 मिली काढ़ा सुबह और शाम सेवन करने से ब टीबी की बीमारी ठीक होती है। इस दौरान दूध का सेवन करना चाहिए।

10. रोगप्रतिरोधक क्षमता

गिलोय सत्व या गिलोय जूस का नियमित सेवन शरीर की इम्युनिटी पॉवर को बढ़ता है। जिससे सर्दी–जुकाम समेत कई तरह की संक्रामक बीमारियों से बचाव होता है। गिलोय कफ को नियंत्रित करती है साथ ही साथ इम्युनिटी पॉवर को बढ़ाती है जिससे अस्थमा और खांसी जैसे रोगों से बचाव होता है और फेफड़े स्वस्थ रहते हैं। इम्युनिटी बढ़ाने के लिए दिन में दो बार दो से तीन चम्मच (10–15 मिली) गिलोय जूस का सेवन करें।

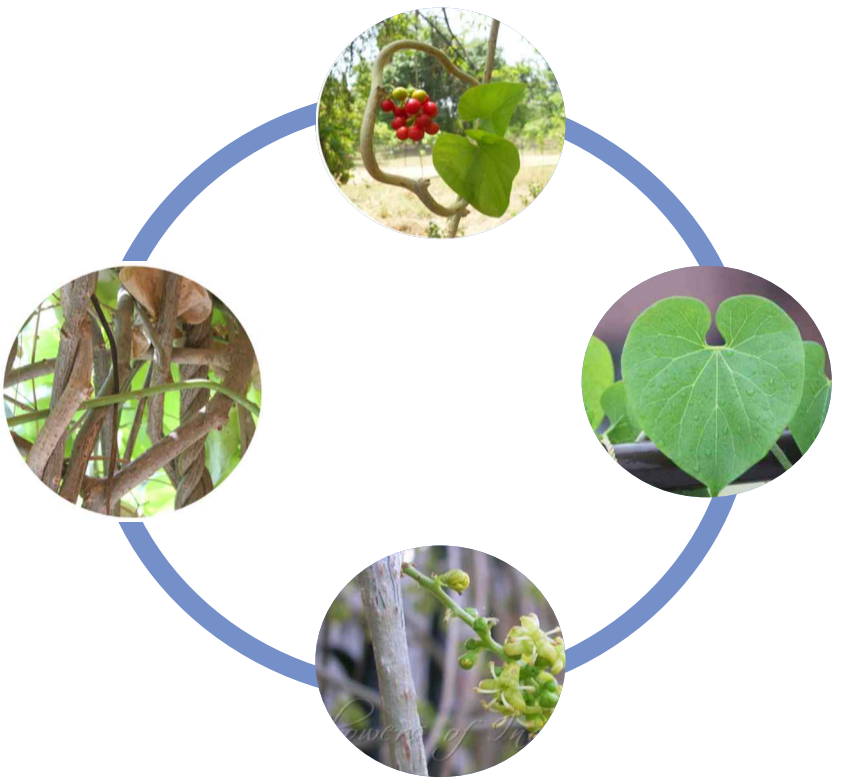

यांत्रिकरण से फसल उत्पादन व उत्पादकता में वृद्धि

एच. पी. वर्मा, राजेश कुमार, मोहन लाल जाट एवं भूपेन्द्र सिंह
यांत्रिक कृषि फार्म, उम्मेदगंज, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

भारत की बढ़ती जनसंख्या की समस्या को हल करने के लिए एक वर्ष में कई फसल लेना आवश्यक है इसके लिए उन्नत बीज, रासायनिक खाद, कीटनाशक दवा तथा पानी की समुचित व्यवस्था के साथ आधुनिक कृषि यन्त्रो का प्रयोग भी अति आवश्यक है। कृषि क्षेत्र में सभी कार्य कृषि यन्त्रों से करना सम्भव है जैसे जुताई, बुवाई, सिंचाई, कटाई एवं मंडाई इत्यादि।

कृषि उत्पादन बढाने में कृषि में यंत्रीकरण का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान है। यंत्रीकरण से फसलो का उत्पादन एवं उत्पादकता कुशलता पूर्वक बढ़ाई जा सकती है कृषि उत्पादकता में यंत्रीकरण से फसल उत्पादकता में 12–34 प्रतिशत व किसानों की कुल आमदनी में 30–50 प्रतिशत तक बढ़ोतरी की जा सकती है।

(अ) भूमि की तैयारी हेतु उपयुक्त कृषि यन्त्र

भू–परिष्करण या खेत की जूताई, फसल उगाने की एक महत्वपूर्ण क्रिया है। भूमि की अच्छी जुताई से भूमि की संरचना मे सुधार, जल अधिग्रहण क्षमता में वृद्धि, वायु संचार एवं खरपतवार नियन्त्रण आदि आसानी से किया जा सकता है।

1. हेरो: इसका प्रयोग एक वर्षीय, द्विवर्षीय एवं बहुवर्षीय खरपतवारों को नष्ट करने के लिए किया जाता है। खेत में गोबर की खाद, हरी खाद व मिटटी को मिलाने का काम भी करता है इसके प्रयोग से परम्परागत कृषि की तुलना में 24 प्रतिशत मजदूर व 3–4 प्रतिशत उपज में बढ़ोतरी होती है।

2. कल्टीवेटर: यह प्राथमिक भू–परिष्करण यंत्र है। इसके द्वारा खरपरवारों का नियन्त्रण आसानी से होता है तथा मिट्टी में नमी बरकरार रहती है इसके प्रयोग से 25–30 प्रतिशत मजदूर व 3–4 प्रतिशत उपज में वृद्धि होती है।

3. रोटावेटर : इस यंन्त्र के द्वारा सुखे एवं खेत की नर्सरी तैयार करने तथा स्ट्रा एवं हरी खाद को खेत मे मिलाने के लिए सहायक है इसकी सहायता से 60 प्रतिशत मजदूरी की बचत एवं 3–4 प्रतिशत उपज में

बढ़ोतरी होती है।

4. ट्रैक्टर चलित पटेला: इस यंत्र का उपयोग खेत की मिट्टी को बराबर करने तथा मिट्टी को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने मे किया जाता है इस यंन्त्र के द्वारा परम्परागत कृषि यंन्त्र की तुलना मे 30 प्रतिशत मजदूरी की बचत एवं 2–3 प्रतिशत उपज मे वृद्धि होती है।

(ब) बीज एवं खाद डालने वाले यंन्त्र

परम्परागत कृषि यन्त्रो के द्वारा बीजों की अधिक गहराई व अनियंत्रित मात्रा गिरती है जिससे बीज दर अधिक रखनी पडती है इन कमियों को दूर करने के लिए आधुनिक कृषि यन्त्रों का प्रयोग कर फसल उत्पादन में 10–15 प्रतिशत वृद्धि की जा सकती है। यंन्त्र के द्वारा उचित मात्रा में बीज व खाद आसानी से उचित गहराई तक डाला जा सकता है।

1. सीड् ड्रील द्वारा: सीड ड्रील द्वारा बीज सह खाद प्रयोग विभिन्न फसलों में किया जाता है सीड ड्रील द्वारा बीज व खाद को अलग–अलग गहराई पर दिया जा सकता है जिससे पोषक तत्व फसल को आसानी से उपलब्ध हो जाते है। इस यंन्त्र द्वारा बीज सह खाद प्रयोग करने से परम्परागत कृषि यंन्त्र की तुलना मे 70 प्रतिशत मजदूरी की बचत एंव 3–4 प्रतिशत उपज मे बढ़ोतरी होती है।

2. धान की सीधी बुवाई यंन्त्र: शुष्क भूमि क्षेत्र में धान की सीधी बुवाई हेतु उपयुक्त यंन्त्र है।

(स) निराई–गुडाई के आधुनिकरण यंन्त्र

फसलों की निराई–गुडाई (खरपतवार निकालने के लिए) के लिए यांत्रिक विधि का प्रयोग सुविधाजनक रहता है इसमे प्रयुक्त अधिकांश यन्त्र मानव, पशु और पावर चलित होते है। मानव द्वारा खरपतवार निकालना बहुत अच्छा होता है लेकिन यह बहुत धीमी प्रकिया एवं अधिक खर्च वाली विधि है इसलिए आधुनिक यंन्त्रों का प्रयोग कर फसल उत्पादन व उपज में कम खर्च व कम समय में निराई–गुडाई कर बढ़ोतरी की जा सकती है।

1. टाइन कल्टीवेटर : इसका मुख्य कार्य सूखा या गीला नर्सरी बेड तैयार एवं चौड़ी कतार में निराई–गुडाई करने के लिए किया जाता है इस यंन्त्र से मजदुरी की 50 प्रतिशत बचत होती है।

(द) पौध संरक्षण यंन्त्र

सभी फसलों मे कीट एवं बीमारियों का प्रयोग होता है इन बीमारियों के कारण फसल में नुकसान बहुत होता है इसके अतिरिक्त पौध की बढ़वार को खरपतवार से नुकसान होता है। कीट, बीमारियों एवं खरपतवार की रोकथाम के लिए विभिन्न प्रकार की दवाईयों का प्रयोग किया जाता है। ये दवाईयाँ पौध संरक्षण यंन्त्र जैसे स्प्रेयर तथा डस्टर के प्रयोग से कम समय मे अधिक क्षैत्र में डाला जा सकता है।

1. स्प्रेयर: इसके प्रयोग से विभिन्न रसायनिक जैसे खरपतवारनाशी,

2. ब्रुम स्प्रेयर: इसके द्वारा विभिन्न फसलों में कम समय में अधिक क्षेत्रफल पर विभिन्न रसायन जैसे किटनाशक, कवकनाशक, खरपतवारनाशी इत्यादि का स्प्रे प्रयोग किया जाता है।

(य) फसल कटाई एवं मंडाई के आधुनिक यंन्त्र

फसल कटाई करने के लिए अनेक यन्त्रो का प्रयोग होने लगा है। पारम्परिक यन्त्रों की तुलना से आधुनिक यन्त्रों द्वारा कम मेहनत कम खर्च द्वारा कम समय में अधिक कार्य किये जाते है।

1. कम्बाईन हार्वेस्टर : कम्बाईन हार्वेस्टर से एक साथ फसल की कटाई, मंडाई एवं सफाई करतें है। इस मशीन से पारम्परिक विधि की तुलना में 80–90 प्रतिशत मजदूरी की बचत एवं 33 प्रतिशत संचालक खर्च में बचत होती है।

2. थ्रैसर: थ्रैसर मशीन द्वारा विभिन्न फसलों की गहाई व सफाई की जाती है थ्रैसर मशीन द्वारा कम समय मे अधिक मात्रा में गहाई व सफाई मानव संसाधन की तुलना मे काफी अधिक की जा सकती है जिससे लागत में काफी कमी आती है।

किसानों के लिए सुरक्षात्मक वस्त्र

सत्यनारायण रेगर, भेरु लाल कुम्हार, नरेन्द्र नटवाडीया, विजय कुमार एवं मोनिका मीणा
कृषि विश्वविद्यालय कोटा, जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर एवं इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर

भारत एक कृषि प्रधान देश है क्योंकि इसकी लगभग 60 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। कृषि उत्पादन हेतु किसान खेत व बीज तैयार करने से लेकर फसल की कटाई तक कई कार्यो का निष्पादन करता है और उस दौरान धूप, धूल, मिट्टी भूसी आदि के सम्पर्क में आता है। कृषि कार्यो में शुरू से ही महिलाओं की भागीदारी पुरूषों के बराबरी की रही है जैसे बीज तैयार करना, खेत खोदना, फसल काटना एवं एकत्रित करना, भण्डारण करना, थ्रेसिंग, पशुपालन इत्यादि उक्त सभी कार्यो को करने के दौरान किसान कहीं ना कहीं परोक्ष या अपरोक्ष रूप से दूषित वातावरण के प्रभाव में आता है जिसका सीधा असर उसके स्वास्थ्य पर पड़ता है तथा कई कठिनाइयाँ जैसे आखों में जलन, पानी आना, नाक में खुजली व छींक, जुकाम, धूप का त्वचा पर प्रभाव इत्यादि स्वास्थ्य सम्बन्धित समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कृषि कार्य करते समय होने वाली स्वास्थ्य सम्बन्धित समस्याओं को ध्यान में रखते हुए अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना के अन्तर्गत वस्त्र एवं परिधान अभिकल्पना विभाग, गृह विज्ञान महाविद्यालय, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर के वैज्ञानिकों द्वारा कुछ सुरक्षात्मक वस्त्र तैयार किए गए है एवं उन्हें थ्रेसिंग या कृशि कार्यो में लगे श्रमिकों को पहनाकर देखा गया है। ये वस्त्र उनके लिए सुरक्षात्मक सिद्ध हुए है।

धूप, धूल, मिट्टी भूसी से होने वाली परेशानीयां इस प्रकार है

- सिर दर्द
- चक्कर आना
- लू लगना
- एलर्जी
- सांस सम्बन्धित कठिनाइयाँ
- आंखों में जलन व पानी आना
- बालों में भूसा चिपकने के कारण बालों का रूखा होना तथा झड़ना

धूप, धूल, मिट्टी भूसी से बचने के लिए किसान अपने सिर और मुंह को साफे से ढकते है व महिलाएं साड़ी या ओढने का प्रयोग करती है। परन्तु कार्य के दौरान यह वस्त्र बार बार खुल जाते है या पूरी तरह से शरीर को ढक्कर नहीं रख पाते हैं। धूप, धूल, मिट्टी भूसी के कणों से मुंह व गर्दन आदि को बचाने के लिए निम्नलिखित प्रकार के मास्क तैयार किये गये है।

स्कार्फ मास्क : यह मास्क पतले कपड़े का बना हुआ है। यह देखने में बोंधे हुए दुपट्टे की तरह लगता है जिसे बहुत आसानी से पहना व उतारा जा सकता है। पतले सूती कपड़े का बना होने के कारण इसे पहनकर ना तो अधिक गर्मी लगती और ना ही सांस लेने में कठिनाई होती है, अतः इसे लम्बे समय तक पहना जा सकता है। इसका आकार इस तरह बनया गया है जिससे नाक व मुंह पूरी तरह ढंक जाए व धूल व भूसा अंदर प्रवेश न करें। स्कार्फ के माथे व नाक के भाग पर इलास्टिक होने के कारण यह बार–बार खिसकता नहीं है व इसे पानी आदि पीने के लिए नीचे भी किया जा सकता है। अतः इसे उतारने का आवश्यकता नहीं पड़ती।

हुड मास्क : सिर, मुंह, नाक व गर्दन को ढ़कने के लिए टोपीनुमा हुड मास्क तैयार किया गया है। यह हौजरी के कपड़े से बनाया गया है जिसमें पर्याप्त लचक होने के कारण इसे आसानी से पहना व उतारा जा सकता है। इससे सिर गर्दन व चेहरे को सम्पूर्ण सुरक्षा मिलती है। इससे भी नाक के ऊपरी भाग में इलास्टिक लगी हुई है जिसके कारण इसे आसानी से नीचे करके पानी आदि पीया जा सकता है।

कैपरान मास्क : यह भी हुड मास्क की तरह सिर, मुंह, नाक व गर्दन को पूरी तरह से ढक लेता है। यह सूती कपड़े का बना हुआ है। इसमें आगे की ओर बटन पट्टी बनाई गई है, जिससे इसे बहुत ही आसानी से उतारा व पहना जा सकता है। मुंह व नाक को ढ़कने के लिए लगाए गए मलमल के कपड़े को आवश्यकतानुसार आसानी से हटाया जा सकता है।

एप्रेन : धूप, धूल व भूसे इत्यादि से बचाने के लिए एप्रेन तैयार किया गया है परन्तु गर्दन व सिर के लिए एप्रेन में हुड लगाया गया है। हुड के अगले सिरे पर इलास्टिक लगाया गया है ताकि उनका सिर ढ़का रहे एवं हुड बार–बार न उतरे। बाजू को धूल व मिट्टी से बचाने के लिए एप्रेन की आस्तीन पर कफ की जगह इलास्टिक लगाया गया है ताकि झुककर कार्य करते समय कोई रूकावट न हो। एप्रेन में दो जेब लगाई गई है जिनमें किसान अपने जरूरत का सामान डाल सकते है। जेबों पर ढक्कन लगाए गए है जिससे उनमें भूसा इक्कट्ठा नहीं होता।

मास्क : उड़ते हुए भूसे व धूल के कण सांस लेते समय किसानों के नाम में प्रवेश कर जाते हैं जिससे उनके नाम में खुजली होने लगती है व पानी बहने लगता है। ये कण सांस के द्वारा व्यक्ति के फेफड़ों में प्रवेश कर जाते है जिस कारण उनकी सांस फूलने लगती है। कई लोक दमे के शिकार भी हो जाते है। इन समस्याओं से बचने के लिए दो तरह के मास्क चोंच जैसा मास्क व पटलीदार मास्क तैयार किए गए हैं जिनके दोनों सिरों पर इलास्टिक लगा है ताकि ये आसानी से पहने व उतारे जा सकें। इनका आकार इस तरह का बनाया गया है जिससे नाम व मुंह पूरी तरह ढक जाए व धूल अन्दर प्रवेश ना करे। ये मास्क पतले सूती कपड़े के बने हैं जिन्हें पहनकर न अधिक गर्मी लगती है और ना ही सांस लेने में कठिनाई होती है। अतः इन्हें लम्बे समय तह पहना जा सकता है। किसान भाई अपनी पसन्द के अनुसार किसी भी मास्क का चयन कर सकते है।

हाथों में जख्म व खुजली होना : थ्रेसिंग के दौरान लम्बे समय तक कार्य करने वाले किसानों के हाथों में जख्म हो जाते है जिनसे बचने के लिए दस्ताने का प्रयोग करें।

सुरक्षित बीज भण्डारण : आज की आवश्यकता कल की जरूरत

मोहन लाल जाट, एच. पी. वर्मा, भाग चन्द धायल एवं राजेश कुमार
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा एवं कृषि महाविद्यालय, जोधपुर

फसल कटाई उपरान्त बीजों को कम नमी, कम तापमान व वायुरोधी स्थान पर रखने से उनकी गुणवत्ता को काफी समय बचाया जा सकता है, लेकिन बीजों के भण्डारण के स्थान पर अधिक नमी हो तो बीज में कई प्रकार के कीट व कवकों का आक्रमण हो जाता है। जिससे बीजों की गुणवत्ताा में भारी नुकसान पहुंचता है। भंडारण के लिए कीट प्रबन्धन का कार्य फसल की कटाई से ही शुरू हो जाता है। इसके लिए कटा, गहा एवं ढुला में प्रयुक्त यंत्रों व साधनों को कीट मुक्त रखना चाहिए। खलिहान को भी समतल एवं साफ करके ही फसल रखनी चाहिए। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि फसल कटने के बाद वर्षा या अन्य कारणों से बीज व अनाज भीगना नही चाहिए क्योंकि भीगे अनाज व बीजों में कीटों का प्रकोप अधिक होता है। बीजों को बचाने हेतु समय–समय पर बीज भंडारण से पूर्व व बाद में भंडारण कक्ष एवं पात्र को कीट मुक्त करने के उपयुक्त उपायों को अपनाकर कीट के प्रकोप को निर्धारित सीमा के नीचे रखा जा सकता है जो निम्न प्रकार हैं ।

भण्डार गृह के लिए मुख्य बिन्दु

1. भण्डारण के लिए स्थान आस–पास के धरातल से ऊंचा होना चाहिए। जहा पानी नहीं भरना चाहिए एवं वर्षा का पानी रूकना नहीं चाहिए। जहां दीमक का प्रकोप हो, वहां भण्डार गृह नहीं होने चाहिए।
2. भण्डार गृह की सतह चिकनी एवं गड्ढे रहित होनी चाहिए।
3. भण्डार गृह की दीवारों में किसी प्रकार की दरारें नहीं होनी चाहिए क्योंकि ये कीड़ों के प्रजनन का महत्वपूर्ण स्थान होता है।
4. भण्डार गृह की खिड़कियां बन्द होनी चाहिए तथा छाया वाले स्थान पर होनी चाहिए।
5. भण्डार गृह की छत में भी दरारें नहीं होनी चाहिए, जिससे छत से आने वाली नमी को रोका जा सकें।
6. दरवाजे बड़े होने चाहिए ताकि बीज निकालने एवं अन्दर करने में आसानी रहे।
7. भण्डार गृह में विण्डो ट्रेप व ग्रेन प्रोब का इस्तेमाल करके कीड़ों के आगमन का पता लगाकर उसका सही उपचार किया जा सकता हैं।

भंडारण से पूर्व अपनाये जाने वाले उपाय

- सबसे पहले बीज भंडारण के काम में लेने वाले कमरे, गोदाम या पात्र जैसे कुठला इत्यादि के सुराखों एवं दरारों को गीली मिट्टी या सीमेंट से भर कर बंद कर देते हैं।

- यदि मटके में भंडारण करना है तो पात्र में आवश्यकतानुसार उपले या घासे डालें और उसके उपर 500 ग्राम सूखी नीम की पत्तियां डालकर घुआं करके पात्र को उपर से बन्द करके वायु अवरोधी कर दें। उस पात्र को 4 से 5 घंटे बाद खोलकर ठंडा करने के पश्चात साफ करके बीज या अनाज का भंडारण करें। यदि मटका अंदर व बाहर से एक्रीलिक (एनेमल) पेंट से पुते हों तो 20 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को एक लीटर पानी में मिलाकर बाहर छिड़काव करें एवं छाया में सुखाकर प्रयोग करें। पात्र में बीज या अनाज भरने के बाद पात्र का मुंह बन्द कर वायु अवरोधी कर दें। पात्र में बीज भरने से पूर्व बीज को अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए जिससे बीज में नमी की मात्रा 10 प्रतिशत या उससे कम रह जाए। कम नमी वाले बीजों में कीटो का प्रकोप कम होता हैं तथा जिससे भण्डारण अवधि भी ज्यादा होती हैं।

बीज में नमी की मात्रा (%)	भण्डारण अवधि
11-13	1/2 वर्ष
10-12	1 वर्ष
9-11	2 वर्ष
8-10	4 वर्ष

- यदि भंडारण कमरे या गोदाम में करना है तो उसे अच्छी तरह साफ करने के बाद चार लीटर मैलाथियान या डी.डी.वी.पी. को 100 लीटर पानी में (40 मि.ली. कीटनाशी एक ली. पानी में) घोलकर पुरे गोदाम या गोदाम में छिड़काव करना चाहिए।

- बीज रखने हेतु नई बोरियों का प्रयोग करें। यदि बोरियां पुरानी हैं तो उन्हें गर्म पानी में 50 सें. पर 15 मिनट तक डुबोकर रखे या फिर उन्हें 40 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 40 ग्राम डेल्टामेथ्रिन 2.5 डब्लू पी (डेल्टामेथ्रिन 2.8 सी की 38.0 मि.ली.) प्रति लीटर पानी के घोल में 10 से 15 मिनट तक भिगोकर छाया में सुखाने के बाद ही बीज या अनाज भरने के काम लेनी चाहिए।

- नये बीज का भंडारण गोदामों में करने से पहले परीक्षण कर यह पता कर लेना चाहिए कि नये बीज में कीटो का प्रकोप है या नही। यदि कीटो का प्रकोप है तो भंडार गृह में रखने से पूर्व बीज को एलुमिनियम फॉस्फाइड द्वारा प्रधूमित कर लेना चाहिए। ऐसे बीज जिनकी बुआई अगली फसल के बुवाई तक निश्चित हो, उनको कीटनाशी जैसे 6 मि.ली. मैलाथियान या 4 मि.ली. डेल्टामेथ्रिन को 500 मि.ली. पानी में घोलकर प्रति क्विंटल बीज की दर से उपचारित कर छाया में सुखाकर भण्डारण पात्र में रख दें। इस प्रकार कीटनाशी द्वारा उपचारित कर बीजों के पात्र को किसी रंग

द्वारा रंग कर पात्र के उपर उपचारित लिख देते हैं। इस प्रकार किया हुआ उपचार कम से कम छः माह तक काफी प्रभावी रहता है। परन्तु ऐसा उपचार खाने वाले अनाज में नहीं करना चाहिए एवं उपचारित बीज को कभी भी आदमी या जानवरों द्वारा नही खाना चाहिए। यदि सम्भव हो तो बीज को40–50 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान पर काले पॉलीथीन के ऊपर 8–10 घण्टे सुखाने के बाद भण्डारित करना चाहिए जिससे कीटों का प्रकोप कम हो जाता है। उसके बाद बीजों को 700 गेज पॉलीथीन में सील करके, रख देना चाहिए। जिससे भण्डारण में कीटों का प्रकोप नहीं होता तथा अंकुरण क्षमता भी प्रभावित नहीं होती है।

- यदि भंडारण गोदाम में कर रहे हैं तो कभी भी पुराने बीज या अनाज के साथ नये बीज या अनाज को नहीं रखना चाहिए। बीज भरी बोरियों या थैलों को लकड़ी या प्लास्टिक की चौकियों, फट्टों अथवा 1000 गेज की पोलीथीन चादर या बांस की चटाई पर रखना चाहिए ताकि उनमें नमी का प्रवेश न हो सके।

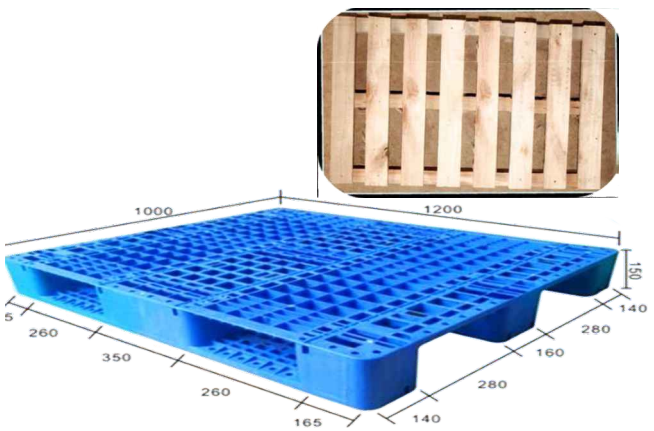

- बीज की बोरियों को लकड़ी या सीआर स्टील पैलेट्स/क्रेट्स पर उचित मैलटग/तिरपाल और दो स्टैक के बीच पर्याप्त जगह के साथ ठीक से यानी फसल, किस्म और चरणवार संग्रहित किया जाना चाहिए।

स्टैक

- बीज बैगों के सभी ढेरों को उचित रूप से लेआउट किया जाना चाहिए और प्रत्येक ढेर के बीच में मुक्त आवाजाही के लिए पर्याप्त जगह छोड़नी चाहिए और दीवारों से दूर रखा जाना चाहिए ताकि ढेर निरीक्षण, धूमन आदि के लिए सुलभ हो सकें।

- विशेष रूप से सोयाबीन आदि के बीजों पर दबाव पड़ने की संभावना होती है और यदि दबाव वांछनीय से अधिक हो तो वे अपनी अंकुरण क्षमता खो सकते हैं। उच्च स्टैक से बचने के लिए सावधानी बरती जानी चाहिए अर्थात 8–10 बैग से अधिक नही। गेहूं, चना, जौ, ग्वार, मूंग, मोठ, अरहर जैसी फसलें अधिक भार सहन कर सकती हैं और ऐसे मामलों में ढेर को 15 से 18 बोरी की ऊंचाई तक उठाया जा सकता है लेकिन 18बोरियों से अधिक की अनुमति नही है। (बैग भार 60किग्रा)

- उपयुक्त वायु संचार के लिए बीज बैग को 3महीने में एक बार पुनः पलट कर ढेर लगाना चाहिए।

- प्रत्येक लॉट पर सटीक रूप से लेबल लगाया जाना चाहिए और स्टॉक के लिए रजिस्टर बनाए रखा जाना चाहिए। स्टैक कार्ड का उपयोग हमेशा ढेर सारे ढेर और धूमन संचालन आदि का विवरण दिखाने के लिए किया जाना चाहिए।

भण्डारण के लिए 700 गेज पॉलीथीन बैग का उपयोग

- इसमें सब्जी वाली फसलों जैसे मिर्च, प्याज आदि का सुरक्षित भण्डारण किया जा सकता है, लेकिन 700 गेज पॉलीथीन का ही उपयोग करें एवं बीज में किसी प्रकार के कीट का प्रकोप नहीं होना चाहिए। बैग में भरने से पूर्व बीज पूरी तरह सूखा (नमी 5 प्रतिशत या 5 से कम) होना चाहिए।

भंडारण के बाद अपनाये जाने वाले उपाय

- भंडारण के कुछ कीट फसल की कटाई से पहले खेत में ही अपना प्रकोप प्रारम्भ कर देते हैं। ये कीट फसल के दानों पर अपने अंडे देते हैं जो आसानी से भंडार गृह में पहुंचकर हानि पहुंचाते हैं। इस प्रकार के कीटों में अनाज का पतंगा प्रमुख है।

प्रधूमित कक्ष

ऐसे कीटों से बीजों को बचाने हेतु एलुमिनियम फॉस्फाइड की दो से तीन गोलियां (3 ग्राम गोली) प्रति टन बीज के हिसाब से 7 से 15 दिन के लिए प्रधूमित कर देते हैं। ऐसा प्रधूमन बीज को भण्डार में रखने के तुरंत बाद करना चाहिए।7 से 15 दिन बाद प्रधूमित कक्ष को कुछ समय के लिए खुला छोड़ देना चाहिए जिससे पूरी गैस बाहर निकल जाये। जब गैस बाहर निकल जाए तो उसी दिन या अगले दिन 40 मिली मैलाथियान, 38 मि.ली. डेल्टामेथ्रिन या 15 मि.ली. बाइफेंथ्रिन प्रति लीटर पानी के हिसाब से मिलाकर बोरियों के उपर छिड़काव कर देना चाहिए। बीज प्रधूमित करते समय एलुमिनियम फॉस्फाइड की मात्रा 6.0 से 9.0 ग्राम (2 से 3 गोली) प्रति टन बीज के हिसाब से आवरण प्रधूमन (कवर फ्यूमीगेशन) एवं 4.5 से 6.0 ग्राम (1.5 से 2.0 गोली) प्रति घन मीटर स्थान (स्पेस या गोदाम फ्यूमीगेशन) के हिसाब से निर्धारित करते हैं। प्रधूमन करते समय अच्छी गुणवत्ता वाला वायुरोधी कवर ही उपयोग में लेना चाहिएजिसकी मोटा700 से 1000 गेज या 200 जी एस एम होनी चाहिए। बहुसतहीय, मल्टीक्रास लैमिनेटेड, 200 जी एस एम के कवर प्रधूमन हेतु अच्छे होते हैं।

- यदि कीट का प्रकोप ज्यादा हो तो प्रधूमन दो बार करना चाहिए। ऐसी स्थति में पहले प्रधूमन के बाद कवर 7 से 10 दिन तक खुला रखने के बाद दूसरा प्रधूमन 7 से 10 दिन के लिये पुनः करना चाहिए जिससे कीटों का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता हैं।

भण्डारण उपरान्त ध्यान रखने वाली मुख्य बाते

- भंडार गृह को 15 दिन में एक बार अवश्य देखना चाहिए। बीज में कीट की उपस्थिति, फर्श व दीवारों पर जीवित कीट दिखा देने पर आवश्यकतानुसार कीटनाशी का छिड़काव करना चाहिए। यदि कीट का प्रकोप शुरूआती है तो 40 मि.ली. डी.डी.वी.पी. प्रति ली. पानी के हिसाब से मिलाकर बोरियों के उपर एवं अन्य स्थान पर हर जगह छिड़काव करें।
- कीट नियंत्रण हो जाने के बाद हर पंद्रह दिन बाद उपर लिखे कीटनाशकों को अदल–बदल कर छिड़काव करते रहना चाहिए।
- मटके या कुठले में रखे जाने वाले बीज को पहले एलुमिनियम फॉस्फाइड की एक गोली द्वारा (एक कि.ग्रा. से आधा टन बीज) प्रधूमित करके रखें। यदि प्रधूमित नही किया है तो रखने के कुछ समय पश्चात उस पात्र में कीटों की उपस्थिति देख लें। अगर कीट का प्रकोप नही है तो दुबारा बन्द कर दे और यदि है तो बीज को एलुमिनियम फॉस्फाइड द्वारा प्रधूमित कर रखना चाहिए।
- भण्डार गृह की सफाई समय–समय पर करते रहना चाहिए। भण्डार गृह में खाली स्थान (बोरियों के अलावा) की सप्ताह में एक बार तथा बोरियों की एक माह के अन्तराल पर सफाई करनी चाहिए। दीवारों एवं छत की सफाई गंदी दिखने पर करनी चाहिए तथा कचरे को जला देना चाहिए।

मक्खन घास उत्पादन की उन्नत तकनीकी

हरफूल मीणा, राजेन्द्र कुमार यादव, विनोद कुमार यादव, सुश्री मनोज एवं उदिति धाकड़
कृषि अनुसंधान केन्द्र एवं कृषि महाविद्यालय उम्मेदगंज, कोटा

भारतीय कृषि में पशुधन एक पूरक उघम के रूप में फसल उत्पादन के साथ–साथ कृषक की आय बढाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं। भारत एक कृषि प्रधान देश हैं और इसके लगभग 70 प्रतिशत लोग गांवो में रहते हैं व उनकी आजीविका मुख्य रूप से कृशि एवं पशुधन पर निर्भर हैं। देश में पशुधन अधिक सख्या में होने के वावजूद भी दूध व अन्य पशुधन उत्पादों का उत्पादन कम हैं, जो सभी प्रकार के फीड और हरे चारे की मांग और आपूर्ति के बीच का अंतर हैं। इस कमी को पूरा करने के लिए हरे चारो की उन्नत तकनीकी की आवश्यकता हैं। मक्खन घास पोषक तत्व युक्त, उच्च पाचनशील एवं रस युक्त हरे चारे की फसल हैं। इसमें अशोधित प्रोटीन 12–14 प्रतिशत एवं अशोधित रेशा की 20–22 प्रतिशत मात्रा पायी जाती हैं जो कि पशुओं को हरे चारे के रूप में खिलाने पर स्वास्थ्यवर्धक होती हैं। इसके चारे में विटामिन ए, कैल्शियम, फॉसफोरस आदि पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं जिससे दुधारू पशुओ को हरे चारे के रूप में खिलाने पर दूध की मात्रा एवं गुणवत्ता (गाढ़ापन) में बढ़ोतरी होती हैं। मक्खन घास रबी मौसम में हरे चारे के लिए उपयुक्त फसल है, इसकी 5–6 कटींग तक प्राप्त की जा सकती हैं। हरे चारे में पानी की मात्रा अधिक होने से पशुओं में पानी की कमी नहीं होती हैं।

खेत की तैयारी : मक्खन घास के बीज वजन में बहुत हल्के होते हैं, इसलिए इसकी बुआई की विधि बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। इसकी बुवाई के लिए मिट्टी को 6 इंच गहराई तक जुताई करें एवं उपरी सतह की मिट्टी को 2 इंच गहराई तक बारीक तैयार करना अंकुरण के लिए उपयुक्त रहता है। बुआई का समय 25 अक्टूबर से 05 नवम्बर के मध्य उपयुक्त रहता हैं।

भूमि एवं बीज उपचार : दीमक की रोकथाम हेतू मिथाइल पैराथियॉन 2 प्रतिशत चूर्ण 25 किग्रा/है0 की दर से मिट्टी मिला देवे व बीज को 2 ग्राम थाईरम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करके बोयें।

बीज दर : मक्खन घास की बुवाई हेतू 14–16 किग्रा/है0 की दर से बीज की मात्रा उपयुक्त रहती हैं।

बुआई की विधि : मक्खन घास की बुआई 30 से.मी. के अन्तराल पर पंक्तियों में करें, या हाथ से बीज को छिडकाव करके भी बुआई कर सकते है। ध्यान रहे कि बीज को आधा इंच से ज्यादा गहरा मिट्टी से ना ढकें। बीज को मिट्टी के अच्छे सम्पर्क में लाने के लिए रोल से मिट्टी के साथ मिलायें।

उर्वरक : सामान्यतया मक्खन घास की फसल में नत्रजन 150 किग्रा/है0, फास्फोरस 60 किग्रा/है0 एवं पौटाश 60 किग्रा/है0 की दर से देवें, तथा एक तिहाई मात्रा नत्रजन, फास्फोरस एवं पौटाश की पूरी

मक्खन घास का बीज

बुवाई करने के 08–10 दिन पश्चात् मक्खन घास की फसल

मात्रा को बुवाई से पूर्व ऊर देवें। नत्रजन की शेष मात्रा को प्रत्येक कटाई के उपरान्त सिंचाई के साथ बराबर मात्रा में डालने पर हरे चारे की उपज में बढोतरी होगी।

अंकुरण : बुवाई के पश्चात् उपर्युक्त मात्रा में बीज के अंकुरण के लिए क्यारी में नमी बनायें रखें, और आदर्श स्थितियों में 8–10 दिन में अंकुरण हो जाता हैं एवं सम्पूर्ण पौधें को स्थापित होने में 4–6 सप्ताह का समय लगता हैं।

निराई–गुडाई : अंकुरण होने के बाद 20–25 दिन की फसल में हाथ से निराई–गुडाई करने के पश्चात् सिंचाई के साथ नत्रजन की एक चौथाई मात्रा को खडी फसल में छिडकाव करना उचित रहता हैं।

सिंचाई : अंकुरण के पश्चात् 2–3 सप्ताह के अन्तराल पर या प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई करते रहना चाहिए।

कटाई : मक्खन घास की फसल बुवाई के 40–45 दिन पश्चात् प्रथम कटाई के लिए उपयुक्त रहती हैं एवं तत्पश्चात् 20–25 दिन के अन्तराल पर कटाई करते रहने पर हरे चारे की अधिक उपज प्राप्त होती हैं। ध्यान रहे कि सिंचाई के साथ शेष नत्रजन की मात्रा को खडी फसल में छिड़काव करते रहना चाहिए ताकि हरे चारे की बढवार अच्छी हो सके।

उपज : मक्खन घास की फसल रबी के मौसम में दुधारू पशुओं एवं अन्य पशुओं को खिलाने के लिए उपयुक्त रहती है। इसकी बुवाई उन्नत शस्य तकनीकियों के साथ करने पर हरे चारे की उपज 900–1100 क्वि0/है0 तक प्राप्त की जा सकती है।

मक्खन घास (40–45 दिन की फसल अवस्था)

बुवाई करने के 40–45 दिन पश्चात् प्रथम कटाई करने का उचित समय

साईलेज संरक्षण की आसान विधि

घनश्याम मीणा, आर. के. बैरवा एवं कमला महाजनी
कृषि विज्ञान केन्द्र, बून्दी एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा

साइलेज क्या ?

पशुओं के लिए किण्वन क्रिया द्वारा संरक्षित किये गये हरे चारे का उत्पाद साइलेज कहलाता है। हरे चारे को उचित हरी अवस्था मे (जब दूधिया दाने बनने लगे) कुट्टी कर हवा रहित स्थान में संग्रहित किया गया चारा साइलेज कहलाता है। इसे पशुओं के लिए चारे का अचार भी कहते है ।

साइलेज क्यो ?

पशुओं को स्वस्थ्य बनाएं रखने व अधिक उत्पादन के लिए यह आवश्यक है कि उन्हे वर्ष भर हरा चारा उपलब्ध रहे। परन्तु पशुपालक ऐसा कर नही पाते है। बारिश के मौसम में हरा चारा प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध रहता है। लेकिन बारिश के बाद सूख जाता है। पशु पालक सिंचाई के साधनों की उपलब्धता के आधार पर हरा चारा उगाते है, परन्तु पानी की कमी एवं छोटी जोत के कारण अधिकतर पशु पालक अपने पशुओं को वर्षभर हरा चारा उपलब्ध नही करा पाते है। इसलिए बारिश के मौसम मे हरे चारे की अधिक उपलब्धता के कारण उसे हरी अवस्था मे ही संरक्षित किया जाता है। जिससे पशुओं को वर्ष भर हरा चारा उपलब्ध कराया जा सकें। हरे चारे की कमी के समय मे साइलेज रूपी संरक्षित पौष्टिक चारा पशुओं के लिए उपलब्ध हो जाता है। बारिश के दिनों मे चारे को सुखाना मुश्किल हो तब साइलेज बना सकते है। चारे को सुखाने से पौष्टिक तत्व नष्ट हो जाते है जबकि साइलेज मे पौष्टिक तत्व नष्ट नही होते है। साइलेज बनाने के लिए खेत से फसल को एक साथ काट कर एक साथ खेत खाली कर दिया जाता है। साइलेज एक हल्का दस्तावर चारा है। साइलेज कम स्थान घेरती है जबकि सूखा चारा अधिक स्थान घेरता है। सूखे चारे मे आग लगने का भय रहता है। जबकि साइलेज में ऐसा डर नही है। साइलेज बनाने के लिए फसली चारे के साथ साथ खरपतवार भी काम में आ जाते है।

साइलेज किससे ?

साइलेज अनेक प्रकार के हरे चारो की फसलों व घासों से बनाया जा सकता है। अदलहनी फसले जैसे मक्का, ज्वार, चरी, बाजरा, नेपियर घास, गिनीघास, सूड़ान घास, पारा घास, संकर हाथी घास, जई तथा दलहनी फसले बरसीम, रिजका आदि। साइलेज उन चारो से अच्छा बनता है जिनके तने मोटे, ठोस व रसदार हो तथा जिनमे कार्बोहाइड्रेट की मात्रा अधिक है। साइलेज बनाने के लिए मक्का की फसल को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। साइलेज बनाने के लिए अदलहनी फसलों के साथ दलहनी फसलों को भी मिला सकते है। घासों व दलहनी फसलों से साइलेज बनाने के लिए उसमे कार्बोहाइड्रेट की पूर्ति के लिए मोलासिस / शीरा /राब या गुड़ के घोल का छिड़काव किया जाता है।

साइलेज कैसे ?

हरे चारे को उचित हरी अवस्था मे (जब दूधिया दाने बनने लगे तब) खेत से काट कर एक दिन के लिए खेत में ही छोड दें। दूसरे दिन कटे हुए चारे को खेत से उठाकर मशीन से कुट्टी कर किसी साइलो बैग या पोली बैग या प्लास्टिक के ड्रम या टंकी में पैरो से खूंद कर भरना है ताकि उसमें हवा नहीं रहे। इसे ऊपर तक भर कर ऊपर से इस प्रकार बन्द करना है ताकि उसमें हवा या पानी प्रवेश न कर सके। इस प्रकार इसे 50 दिन तक रखना है और उसके बाद पशुओ को प्रतिदिन खिलावे। शुरुआत में कम कम खिलावे और बाद में पेट भर खिलावे।

संरक्षण का नया तरीका क्यों ?

साइलेज बनाने की तकनीकी बहुत पुरानी है लेकिन पशुपालक इस तकनीकी को अपना नही रहे है। वैज्ञानिकों ने पशु पालकों से इस तकनीकी को नही अपनाने का कारण पूंछा तो पशुपालकों ने बताया कि इस तकनीकी मे मेहनत अधिक करनी पड़ती है, लागत अधिक आती है, एक साथ अधिक बनानी पड़ती है जो गड्डे या साइलो को खोलने पर जल्दी खराब हो जाती है। गड्ढा या साइलो पक्का बनाना पड़ता है जो स्थान भी घेरता है।

संरक्षण का नया तरीका क्या ?

पशु पालकों से चर्चा में सामने आया कि पक्का साइलो बनाना ही मुख्य समस्या है। वैज्ञानिकों द्वारा इस पक्के साइलो की समस्या के समाधान के लिए प्लास्टिक ड्रम या टंकी या साइलो बैग या पोली बैग की तकनीकी निकाली गयी। साइलो बैग या पोली बैग प्लास्टिक के बोरे होते है जिनमे अन्दर की तरफ पोलीथीन लगी होती है। जिस तरीके के फर्टीलाइजर (यूरीया, डी.ए.पी. आदि) के बैग होते है उसी तरीके के बैग साइलो बैग के रूप में काम में आते है। लेकिन इनमें अन्दर की तरफ पोलीथीन लगी होती है, ताकि इसमें हवा प्रवेश न कर सके, साइलेज अच्छा बने और जल्दी से खराब नही होवे। ये साइलो बैग अलग अलग आकार के (पचास किलो से लेकर पांच सौ किलो तक) आते है। इन साइलो बैग की यही सबसे बडी खासियत है कि ये अलग अलग आकार मे मिलते है। जिनमे पशु पालक पशुओं की संख्या एवं चारे की उपलब्धता के अनुसार साईलेज बना सकता है। एक बैग को एक दिन या 4–5 दिन तक काम मे ले सकते है। इससे साइलेज खराब नही हो पाता है। बडे साइलो को खोलने के बाद उसे अधिक दिनों तक उपयोग मे लेने पर साईलेज के खराब होने की सम्भावना रहती है। साइलो बैगस को कहीं भी लाया ले जाया जा सकता है

और ये स्थान भी कम घेरते है। एक घनफुट साइलो मे 12–16 किलो ग्राम साइलेज आ सकता है। अतः पशुपालक अपने फार्म पर उपलब्ध हरे चारे एवं पशुओं की संख्या के अनुसार साइलेज बना सकते है। साइलेज बनाने के लिए मक्का एवं ज्वार की कटाई भुट्टे निकलने की अवस्था में करें। जब हरे चारे में नमी 65 प्रतिशत रहे तब उसकी कुट्टी काटकर साइलो बेगस मे पैरो से दबा दबा कर भरे, ताकि उसमें हवा न रहे। भरने के बाद बैग का मुंह अच्छी तरह से बांध दे। इसके बाद साइलो बैगस को किसी छायादार स्थान पर रख दें। कुछ ही दिनों में रासायनिक क्रिया होने से साइलेज बनना शुरू हो जाता है और लगभग 50 दिन में साइलेज बन जाता है। इस प्रकार बने हुए साइलेज को 3 से 6 माह तक पशुओं को खिला सकते है। बडे पशुओं को 10–15 किलो साइलेज प्रतिदिन खिला सकते है। लेकिन छोटे पशुओं को साइलेज कम मात्रा मे खिलाते है। बछड़े बछड़ियों को जिनकी उम्र 6 माह से कम है उन्हे साइलेज नही खिलावें। साईलेज को साईलोबेग से निकालने के बाद थोडी देर हवा मे खुला छोडकर फिर पशुओ को खिलावें। क्योकि साईलेज में एक अलग किस्म की गंध होती है जो थोडी देर हवा मे खुला छोडने पर कम हो जाती है। दुधारू पशुओं को दूध निकालने के बाद ही साइलेज खिलावे अन्यथा दूध मे साइलेज की गंध आने लगेगी। पशुओं को शुरूआत मे कम मात्रा मे साइलेज खिलावे और फिर धीरे धीरे मात्रा बढावे। क्योकि पशु आहार मे अचानक परिवर्तन करने से पशु के बीमार होने की सम्भावना रहती है।

❋❋❋

''अभिनव कृषि'' अंकवार प्रकाशित होने वाली विषय सामग्री

अंक	प्रकाशन माह	विषय–विशेषांक
1	**जून**	खरीफ फसल विशेषांक, खरीफ फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार, प्रबंधन, मृदा एवं जल संरक्षण
2	**सितम्बर**	रबी फसल विशेषांक, रबी फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार प्रबंधन, उन्नत कृषि उपकरण
3	**दिसम्बर**	सिंचाई प्रबंधन, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, जैविक खेती, समन्वित कृषि प्रणाली, आधुनिक डेयरी, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन
4	**मार्च**	जायद खेती, संरक्षित खेती, हाई–टेक बागवानी, फल–फूल, सब्जी उत्पादन, मृदा प्रबंधन, पशुपालन प्रबंधन, फल सब्जी परिरक्षण एवं खाद्य प्रसंस्करण

किसान प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का लाभ कैसे उठाये

प्रवेश सिंह चौहान, एस.एस.सिसोदिया, पारुल मेंर्तिया एवं एन. आर. मीणा
महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान एवं नरेन्द्रदेव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

भारत कृषि प्रधान देश है जहां ग्रामीण आबादी का अधिकतम अनुपात कृषि पर आश्रित है। प्रत्येक साल प्राकृतिक आपदा के चलते भारत में किसानों को काफी नुकसान उठाना पड़ता है। बाढ़, आंधी, ओले और तेज बारिश से उनकी फसल खराब हो जाती है। उन्हें ऐसे संकट से राहत देने के लिए केंद्र सरकार ने 13 जनवरी 2016 प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (PMFBY) लागू की है। इसके तहत किसानों को खरीफ की फसल के लिये 2 फीसदी प्रीमियम और रबी की फसल के लिये 1.5% प्रीमियम का भुगतान करना पड़ता है। इस योजना के तहत वाणिज्य और बागवानी फसलों के लिए भी बीमा सुरक्षा प्रदान करती है, हालांकि किसानों को इसके लिए 5% प्रीमियम का भुगतान करना पड़ता है। यह योजना उन किसानों पर प्रीमियम का बोझ कम करने में मदद करेगी जो अपनी खेती के लिए ऋण लेते हैं और खराब मौसम से उनकी रक्षा भी करेगी। बीमा दावे के निपटान की प्रक्रिया को तेज और आसान बनाने का निर्णय लिया गया है ताकि किसान फसल बीमा योजना के संबंध में किसी परेशानी का सामना न करें। यह योजना भारत के हर राज्य में संबंधित राज्य सरकारों के साथ मिलकर लागू की गई है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना में प्राकृतिक आपदाओं के कारण खराब हुई फसल के मामले में बीमा प्रीमियम को बहुत कम रखा गया है। ताकि यह योजना हर किसान तक पहुंचने में मदद मिल सके।

योजना के उद्देश्य

- प्राकृतिक आपदा, कीड़े और रोग की वजह से सरकार द्वारा अधिसूचित फसल में से किसी नुकसान की स्थिति में किसानों को बीमा कवर और वित्तीय सहायता देना।
- किसानों की खेती में रुचि बनाये रखने के प्रयास एवं उन्हें स्थायी आमदनी उपलब्ध कराना।
- किसानों को कृषि में इन्नोवेशन एवं आधुनिक पद्धतियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना।
- कृषि क्षेत्र में ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करना।

इस योजना के तहत शामिल कवरेज

किसानों का कवरेज

अधिसूचित क्षेत्रों में अधिसूचित फसल उगाने वाले पट्टेदार / जोतदार किसानों सहित सभी किसान कवरेज के लिए पात्र हैं। गैर ऋणी किसानों को राज्य में प्रचलित भूमि रिकार्ड अधिकार (आरओआर), भूमि कब्जा प्रमाण पत्र आदि आवश्यक दस्तावेजी प्रस्तुत करना आवश्यक हैं। इसके अलावा राज्य सरकार द्वारा अनुमति अधिसूचित लागू अनुबंध, समझौते के विवरण आदि अन्य संबंधित दस्तावेज भी आवश्यक हैं। अनिवार्य घटक वित्तीय संस्थाओं से अधिसूचित फसलों के लिए मौसमी कृषि कार्यो के लिए ऋण लेने वाले सभी किसान अनिवार्यतः आच्छादित है। स्वैच्छिक घटक गैर ऋणी किसानों के लिए योजना वैकल्पिक है।योजना के तहत अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/महिला किसानों की अधिकतम कवरेज सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रयास किया है।

फसलों की कवरेज : खाद्य फसल (अनाज, बाजरा और दालें), तिलहन एवं वार्षिक वाणिज्यिक/बागवानी की फसल।

जोखिम की कवरेज

फसल के निम्नलिखित चरण और फसल नुकसान के लिए जिम्मेदार जोखिम योजना के अंतर्गत कवर किये जाते हैं।

- **बुवाई/रोपण में रोक संबंधित जोखिम :** बीमित क्षेत्र में कम बारिश या प्रतिकूल मौसमी परिस्थितियों के कारण बुवाई/रोपण में उत्पन्न रोक।
- **खड़ी फसल (बुवाई से कटाई तक के लिए) :** नही रोके जा सकने वाले जोखिमों जैसे सूखा, अकाल, बाढ़, सैलाब, कीट एवं रोग, भूस्खलन, प्राकृतिक आग और बिजली, ओले, चक्रवात, आंधी, टेम्पेस्ट, तूफान और बवंडर आदि के कारण उपज के नुकसान को कवर करने के लिए व्यापक जोखिम बीमा प्रदान की जाती है।
- **कटाई के उपरांत नुकसान :** फसल कटाई के बाद चक्रवात और चक्रवाती बारिश और बेमौसम बारिश के विशिष्ट खतरों से उत्पन्न हालत के लिए कटाई से अधिकतम दो सप्ताह की अवधि के लिए कवरेज उपलब्ध है।
- **स्थानीय त आपदायें :** अधिसूचित क्षेत्र में मूसलधार बारिश, भूस्खलन और बाढ़ जैसे स्थानीय जोखिम की घटना से प्रभावित पृथक खेतों को उत्पन्न हानि/क्षति।

जोखिम के अपवर्जन : कई कारणों से फसलों के नुकसान में बीमा कवर लागू नहीं होगा जैसे युद्ध और आत्मीय खतरे, परमाणु जोखिम, दंगा, दुर्भावनापूर्ण क्षति, चोरी या शत्रुता का कार्य एवं घरेलू और जंगली जानवरों द्वारा चरे जाना और अन्य रोके जा सकने वाले जोखिमों को कवरेज से बाहर रखा गया है।

बीमित राशि / कवरेज की सीमा

अनिवार्य घटक के तहत ऋणी किसानों के मामले में बीमित राशि जिला स्तरीय तकनीकी समिति द्वारा निर्धारित वित्तिय माप के बराबर होगा, जिसे बीमित किसान के विकल्प पर बीमित फसल की अधिकतम उपज के मूल्य तक बढ़ाया जा सकता है। यदि अधिकतम उपज का मूल्य ऋण राशि से कम है तो बीमित राशि अधिक होगी। अधिकतम उपज को चालू वर्ष के न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) के साथ गुणा करने पर बीमा राशि का मूल्य प्राप्त होता है। जहां कहीं भी चालू वर्ष का न्यूनतम समर्थन मूल्य उपलब्ध नहीं है, पिछले वर्ष का न्यूनतम समर्थन मूल्य अपनाया जाएगा। जिन फसलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा नहीं की गई है, विपणन विभाग/बोर्ड द्वारा स्थापित मूल्य अपनाया जाएगा।

बीमा की इकाई

योजना बड़े पैमाने पर आपदाओं के लिए प्रत्येक अधिसूचित फसल के लिए एक 'क्षेत्र दृष्टिकोण आधार' (यानी, परिभाषित क्षेत्रों) पर लागू की गई है। यह धारणा है कि सभी बीमित किसान को बीमा की एक इकाई के रूप में एक फसल के लिए ''अधिसूचित क्षेत्र'' के तौर पर परिभाषित किया जाना चाहिए, जो समान जोखिम का सामना करते हैं और काफी हद तक एक समान प्रति हेक्टेयर उत्पादन के लागत, प्रति हेक्टेयर तुलनीय कृषि आय और अधिसूचित क्षेत्र में जोखिम के कारण एक समान फसल हानि अनुभव करते हैं। अधिसूचित फसल के लिए इंश्योरेंस की यूनिट को जनसंख्या की दृष्टि से समरूप जोखिम प्रोफाइल वाले क्षेत्र से मिलान किया जा सकता है। परिभाषित जोखिम के कारण स्थानीय आपदाओं और पोस्ट–हार्वेस्ट नुकसान के जोखिम के लिए, नुकसान के आकलन के लिए बीमा की इकाई प्रभावित व्यक्तिगत किसान का बीमाकृत क्षेत्र होगा।

क्रियान्वयन एजेंसी

बीमा कंपनियों के कार्यान्वयन पर समग्र नियंत्रण कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के तहत किया जा रहा है। मंत्रालय द्वारा नामित पैनल में शामिल एआईसी और कुछ निजी बीमा कंपनियां वर्तमान में सरकार द्वारा प्रायोजित कृषि, फसल बीमा योजना में भाग लेंगी। निजी कंपनियों का चुनाव राज्यों के उपर छोड़ दिया गया है।

प्रबंधन और योजना की निगरानी

राज्य में योजना के कार्यक्रम की निगरानी के लिए संबंधित राज्य की मौजूदा फसल बीमा पर राज्य स्तरीय समन्वय समिति जिम्मेदार होती है। किसानों को अधिकतम लाभ सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक फसली मौसम के दौरान प्रभावी कार्यान्वयन के लिए निम्नलिखित निगरानी उपाय किये गये है।

- नोडल बैंकों के बिचौलिये आगे मिलान के लिए बीमित किसानों (ऋणी और गैर–ऋणी दोनों) की सूची अपेक्षित विवरण जैसे नाम, पिता का नाम, बैंक खाता नंबर, गांव, श्रेणी – लघु और सीमांत समूह, महिला, बीमित होल्डिंग, बीमित फसल, एकत्र प्रीमियम, सरकारी सब्सिडी आदि सॉफ्ट कॉपी में संबंधित शाखा से प्राप्त कर सकते हैं। इसे ई मंच तैयार हो जाने पर ऑनलाइन किया जाता है।
- संबंधित बीमा कंपनियों से दावों की राशि प्राप्त करने के बाद, वित्तीय संस्थाओं, बैंकों को एक सप्ताह के भीतर दावा राशि लाभार्थियों के खाते में हस्तांतरण कर देना चाहिए।
- लाभार्थियों की सूची (बैंकवार एवं बीमित क्षेत्रवार) फसल बीमा पोर्टल एवं संबंधित बीमा कंपनियों की वेबसाइट पर अपलोड किया जाता है।
- करीब 5% लाभार्थियों को क्षेत्रीय कार्यालयों/बीमा कंपनियों के स्थानीय कार्यालयों द्वारा सत्यापित किया जा सकता है जो संबंधित जिला स्तरीय निगरानी समिति और राज्य सरकार/फसल बीमा पर राज्य स्तरीय समन्वय समिति को प्रतिक्रिया भेजतें है।
- बीमा कंपनी द्वारा सत्यापित लाभार्थियों में से कम से कम 10% संबंधित जिला स्तरीय निगरानी समिति द्वारा प्रतिसत्यापित किए जायेंगें और वे अपनी प्रतिक्रिया राज्य सरकार को भेजते है।
- लाभार्थियों में से 1 से 2% का सत्यापन बीमा कंपनी के प्रधान कार्यालय / केंद्र सरकार द्वारा नियुक्त स्वतंत्र एजेंसियों / राष्ट्रीय स्तर की निगरानी समिति द्वारा किया जा सकता है और वे आवश्यक रिपोर्ट केन्द्र सरकार को भेजते है।

कहां से लें प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का फॉर्म

इस योजना (PMFBY) के लिए ऑफलाइन और दूसरा ऑनलाइन नजदीकी बैंक की शाखा में जाकर फसल बीमा योजना (PMFBY) का फॉर्म भर सकते हैं।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के लिए दस्तावेजों की जरूरत

- किसान की एक फोटो
- किसान का आईडी कार्ड (पैन कार्ड, ड्राइविंग लाइसेंस, वोटर आईडी कार्ड, पासपोर्ट, आधार कार्ड)
- किसान का एड्रेस प्रूफ (ड्राइविंग लाइसेंस, वोटर आईडी कार्ड, पासपोर्ट, आधार कार्ड)
- खेत का खसरा नंबर / खाता नंबर।
- खेत में फसल की बुवाई का सबूत।
- अगर खेत बटाई पर फसल की बुवाई की गयी है, तो खेत के मालिक के साथ करार की कॉपी।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के लिए ध्यान रखने वाली अन्य बातें

1. फसल की बुआई के 10 दिनों के अंदर आपको PMFBY का फॉर्म भरना जरूरी है।
2. फसल काटने से 14 दिनों के बीच अगर आपकी फसल को प्राकृतिक आपदा के कारण नुकसान होता है, तब भी आप बीमा योजना का लाभ उठा सकते हैं।
3. बीमा की रकम का लाभ तभी मिलेगा जब आपकी फसल किसी प्राकृतिक आपदा की वजह से ही खराब हुई हो।
4. दावा भुगतान में होने वाली देरी को कम करने के लिए फसल काटने के आंकड़े जुटाने एवं उसे साईट पर अपलोड करने के लिए स्मार्ट फोन, रिमोट सेंसिंग ड्रोन और जीपीएस तकनीक का इस्तेमाल किया जाता है।
5. कृषक को स्थानीय आपदा के 72 घण्टो के अन्दर बीमा कंपनी के टोल फ्री नंबर (1800 209 5959) पर अथवा लिखित में अधिकतम 7 दिवस में स्थानीय कृषि विभाग के माध्यम से सूचित करना आवश्यक है।

विशेष वेब पोर्टल और मोबाइल एप

भारत सरकार ने हाल ही में बेहतर प्रशासन, विभिन्न एजेंसियों के बीच सही तालमेल, इस बारे में जानकारी के प्रचार–प्रसार और प्रक्रिया में पारदर्शिता के लिए एक बीमा पोर्टल शुरू किया है। एंड्रॉयड आधारित फसल बीमा एप भी शुरू किया गया है, जो फसल बीमा, कृषि सहयोग और किसान कल्याण विभाग (डीएसी एवं परिवार कल्याण) की वेबसाइट से डाउनलोड किया जा सकता है।

जैविक खेती और किसान

राजेश कुमार, एच. पी. वर्मा, भूरी सिंह, वर्षा गुप्ता, बलदेव राम, खजान सिंह एवं के. सी. मीना
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

भारत में बढ़ती हुई जनसंख्या एक गंभीर समस्या है, बढ़ती हुई जनसंख्या को भोजन की आपूर्ति करना कृषि वैज्ञानिकों के सामने एक बड़ी चुनौती है संपूर्ण आवादी को भोजन की आपूर्ति हेतु अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए तरह–तरह के रासायनिक खादों, कीटनाशकों का उपयोग पारिस्थितिक तंत्र को प्रभावित करता है जिससे भूमि की उर्वर शक्ति में गिरावट आती है, साथ ही वातावरण प्रदूषित होता है जिसके कारण मनुष्य के स्वास्थ्य में गिरावट आती है। वर्तमान समय में कृषि उपकरण, बीज, खाद व मजदूर सभी मंहगे होने से खेती महंगी हो गयी है। कृषि उपकरण, बीज, खाद,पानी और मजदूर सब महंगे होने से किसानों पर कर्ज का दवाव लगातार बढ़ रहा है।

उपरोक्त सभी समस्याओं से निपटने के लिये हमें जैविक खेती की आवश्यकता है। सरकार जैविक खेती को अपनाने के लिए लगातर प्रचार–प्रसार कर रही है। हम रासायनिक खादों, कीटनाशकों के उपयोग के स्थान पर जैविक खादों एवं कीटनाशकों का उपयोग कर, अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते है इससे पर्यावरण भी सुरक्षित रहेगा। खेती करना अब कोई आसन काम नही है इसकी लागत ही इसकी कहानी बया करती है। सरकार की इतनी कोशिशों के बावजूद ऋणी किसानों की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। रिजर्व बैक का अनुसार पाँच में से तीन किसान साहूकारों से ऋण लेकर खेती करते है।

भंडारण और गुणवत्ता की कमी के कारण हर वर्ष बाजार में सब्जियों की कीमत में भारी गिरावट आ जाती है। कई बार तो खेत से बाजार तक का खर्च भी नही निकलता। इनमें सड़न की दर में वृद्धि के कारण किसान उन्हें खेतों में ही नष्ट कर देते है। कई बार किसान सब्जियों के दाम अत्यधिक कम होने के कारण रोड़ पर ही फेक देते है। हमारे पास जमीन तो सीमित है लेकिन जनसंख्या का दबाव बढता ही जा रहा है और मांग की आपूर्ति के लिए अधिकतम पैदावार के लगातार प्रयास किये जा रहे है। ऐसे में सस्ती और टिकाऊ खेती ही अंतिम विकल्प है। जब लागत कम होगी तब ही किसानों को वांछित लाभ होगा। इसके लिए मंहगी रासायनिक खेती के स्थान पर परपरागत खाद के इस्तेमाल और जैविक खेती का विकल्प सामने आता है, पहले भी हमारे किसान जैविक खेती करते आये है। लेकिन द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद रासायनिक खाद का उपयोग इस उम्मीद से हुआ कि से हमारे खाद्यान्न संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति करेगी। इसके उपयोग से उत्पादन में वृद्धि तो हुई लेकिन इससे किसानों की निर्भरता रासायनिक खादों पर बढ़ती चली गयी। मिट्टी उर्वरा शक्ति लगातर कम हो रही है। जैव विविधता और पर्यावरण को भारी नुकसान हुआ। रासायनिक खेती और इसके उत्पादों के दुष्प्रभाव दुनिया को निपटने का रास्ता न केवल हमारा देश अपितु पूरी दुनिया के किसान तलाश रहें है। वर्तमान समय में द्वितीय हरित क्रान्ति की आवश्यकता है अब हम द्वितीय हरित क्रांति के दौर में गैर रासायनिक, सस्ती, टिकाऊ, स्वस्थ और इको फ्रेंडली और उत्पादन लक्ष्य को प्राप्त कर सकने वाली खेती कैसे करें इस पर चिंतन करने की जरूरत है। इस लक्ष्य पूर्ति के सबसे अच्छा विकल्प है जैविक खेती जहां रासायनिक खेती की तुलना में कम व्यय वाली, स्थाई और स्वस्थ है।

इसमें रासायनिक खाद, रासायनिक कीटनाशक और रासायनिक खरपतवारनाशी दवाओं के स्थान पर जैविक खाद और जैविक कीटनाशकों का इस्तेमाल किया जाता है। जैविक खेती में भी वैज्ञानिकों ने अनेक अनुसंधानों से कई नये आयाम जोड़े है जिससे इनके इस्तेमाल कर किसान भरपूर खेती का लाभ ले सकते हैं और अधिक पैदावार प्राप्त कर आर्थिक लाभ कमा सकते है। खाद के रूप में गोबर खाद, मटका खाद, हरी खाद, केंचुआ खाद, नाडेप खाद आदि का इस्तेमाल किया जाता है ये खाद जहां खेतों की मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाती हैं वही जैव विविधता का संबर्धन भी करती है। ये रासायनिक खाद से बहुत सस्ती हैं और इनका निर्माण भी आसान है। ये पर्यावरण को नुकसान नहीं पहुचाती है। जैविक खाद का प्रभाव न केवल एक मौसम में रहता है बल्कि भविष्य के लिए भी खेत की मिट्टी, पानी और हवा को भी जहरीला होने से बचाती है।

जैविक खेती को किसान ऐसे अपना सकते है। दानेदार रासायनिक खाद की जगह एनपीके पाउडर और चिलेटेड सूक्ष्म पोषक तत्त्वों को खड़ी फसल में स्प्रे करें। नमी और गौमूत्र वाले कीटनाशकों का ज्यादा इस्तेमाल करें। अच्छी गुणवन्ता वाले जैविक खेती से उत्पादित बीजों का इस्तेमाल करें। खरपतवार निकालने के लिए खड़ी फसल में निराइ गुड़ाई करें। गर्मियों में खेत की गहरी जुताई कर के खेत को कुछ दिनो के लिए खाली छोड़ दें। इस प्रकार के कुछ तरीकों को अपना कर जमीन, स्वास्थ्य और पर्यावारण को बचाया जा सकता है। और कम खर्च में टिकाऊ खेती की जा सकती हैं।

उपरोक्त सभी समस्याओं से निपटने के लिये गत वर्षो से निरन्तर टिकाऊ खेती के सिद्धान्त पर खेती करने की सिफारिश की गई, जिसे कई प्रदेशों ने इस विशेष प्रकार की खेती को अपनाने के लिए, बढ़ावा दिया जिसे हम ''जैविक खेती '' के नाम से जानते है। भारत सरकार भी इस खेती को अपनाने के लिए प्रचार–प्रसार कर रही है। हम रसायनिक खादों, की कीटनाशकों के उपयोग के स्थान पर जैविक खादों एवं कीटनाशकों का उपयोग कर अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं इससे पर्यावारण भी साफ रहेगा व मनुष्य का स्वास्थ्य भी अच्छा रहेगा।

तिलहनी फसलों के लिए डीएपी से बेहतर है एसएसपी और यूरिया का संयोजन

गौरव प्रकाश, मनोज, पिंकी यादव, संगीता ड़ांगा एवं मनोज कुमार शर्मा
कृषि महाविद्यालय, कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज, कोटा

भारत, विश्व में प्रमुख खाद्य उत्पादक देशों में से एक है। भारतीय कृषि में उर्वरक, उत्पादकता बढ़ाने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। भारत में उर्वरकों का प्रयोग सर्वप्रथम 1950 में किया गया था। शुरूआत में उर्वरकों की खपत बहुत कम थी परन्तु 1960 के अंत तक आते–आते जब उच्च उपज वाली किस्मों, सिंचाई और ऋण की उपलब्धता में वृद्धि हुई तो कृषि फसलों में उत्पादन वृद्धि हेतु उर्वरकों का प्रयोग बढ़ने लगा। पादप पोषण की दृष्टि से पौधों के लिए आवश्यक कुल 17 पौषक तत्वों में से फॉस्फोरस द्वित्तिय महत्वपूर्ण पोषक तत्व है। यह पौधो की जड़ो द्वारा मुख्यतः H_2PO_4- व HPO_4^{2-} आयनो के रूप मे मृदा से अवशोशित किया जाता है। पौधो की जड़ के अंदर अकार्बनिक फॉस्फोरस संचित होता है या पौधों के ऊपरी भाग में वाहित होता है, जहाँ विभिन्न जैव रासायनिक कियाओं द्वारा एन्जाइम, न्यूक्लीक अम्ल और प्रोटीन जैसे यौगिकों में समावेशित हो जाता है। फॉस्फोरस के मुख्यतः दो स्त्रोत होते है – कार्बनिक स्त्रोत (वर्मी कम्पोस्ट, कार्बनिक पदार्थ, गोबर की खाद, हरी खाद आदि) व अकार्बनिक स्त्रोत (खनिज पदार्थ, संश्लेषित रसायनः डीएपी, एसएसपी, रॉक फॉस्फेट इत्यादि)। पौधों के लिए आवश्यक तत्वों में से गंधक एक मुख्य तत्व है जो कि कैल्सियम व मैग्निशियम के साथ द्वितीयक पौषक तत्वों की श्रेणी में शामिल किया गया है। द्वितीयक पौषक तत्वों की भी पौधो में उतनी ही आवश्यकता होती है जितनी की प्राथमिक पौषक तत्वों की होती है। अधिकांश पौधों के द्वारा गंधक SO_4^{-2} के रूप में जड़ो के माध्यम से अवशोषित किया जाता है। गंधक के स्त्रोत– कार्बनिक स्त्रोत (वर्मी कम्पोस्ट, कार्बनिक पदार्थ, गोबर की खाद, हरी खाद आदि) व अकार्बनिक स्त्रोत (खनिज पदार्थ जैसे–जिप्सम, पाईराइट और नत्रजन और फास्फोरस के उर्वरक जैसे–अमोनियम सल्फेट, सिगल सुपर फॉस्पेट, पोटेशियम सल्फेट इत्यादि)।

पौधों मे फॉस्फोरस के कार्य: यह पौधों द्वारा नत्रजन, पौटेशियम, कार्बोहाइड्रेट्स व अन्य तत्वों के उपयोग में सहायता करता है। फॉस्फोरस पौधों में जड़ वृद्धि में सहायक है इसलिए दलहनी तथा जड़ वाली फसलों में इसकी अधिक आवश्यकता होती है। यह न्यूक्लिक अम्ल, फाईटिन और फोस्फो–लिपिडस का मुख्य अवयव है। फॉस्फोरस अनाज वाली फसलों के भी शीघ्र पकने में सहायता करता है एवं पौधे के तने को शक्ति प्रदान करता है तथा भूसे को कड़ा बनाता है। इस प्रकार फसलों को गिरने से रोकता है और भुसे की गुणवत्ता में सुधार लाता है। इसके अतिरिक्त फॉस्फोरस पौधों में अन्य तत्वों के साथ सहययोग करके पुष्प गुच्छों तथा बाली में बीजों की संख्या में वृद्धि कर उपज बढ़ाता है। साथ ही दानों का आकार व गुणवत्ता में सुधार करता है।

पौधों में फॉस्फोरस की कमी के लक्षण: पौधों में नत्रजन की भांती फॉस्फोरस भी गतिशील होता है अतः अभाव होने पर लक्षण पहले पौधों के निचले भागों पर दृश्य होते है तत्पश्चात अग्र भागों पर दिखाई देते है।

- मूलतंत्र का विकास घट जाता है तथा मूलतंत्र दूर्बल हो जाता है।
- फॉस्फोरस के अभाव में पौधों में हंसिया पत्ती रोग हो जाता है। जिसमें पत्तियाँ मुड़कर हंसिया (दराती) जैसी हो जाती है।
- पत्तियाँ अधिक हरी व शिराएँ बैंगनी हो जाती है।
- फूल, फल व बीजों का विकास कम होता है।
- पौधें दूर्बल होते है तथा कीटों व रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है।
- फसल देर से पकती है व अधिक गिरती है।
- पादप उत्पादों की गुणवत्ता में गिरावट आती है।

पौधों मे गंधक के कार्य: गंधक पौधो में हरितलवक के निर्माण में सहायता करता है जो कि प्रकाश संश्लेषण के माध्यम से स्टार्च, शर्करा, तेल, वसा, विटामीन व अन्य महत्वपूर्ण यौगिको का निर्माण होता है। मुख्य रूप से गंधक अमिनो अम्ल–सिस्टीन, सिस्टाइन व मेथिओनिन का मुख्य घटक है। तिलहनी फसलों मे तेल के संश्लेषण के लिए गंधक एक महत्वपूर्ण कारक होता है।

पौधों में गंधक की कमी के लक्षण

- गंधक की कमी के लक्षण प्राय पौधो की नयी पत्तियों में पाए जाते है।
- गंधक की कमी से पत्तियां छोटी व पीली हो जाती है।
- गंधक की कमी से पत्ती की शिराएं शेष भाग की तुलना में ज्यादा पीली हो जाती है।
- सरसों की पत्तियों में गंधक की कमी से पत्तियाँ ऊपर की ओर मुड़कर कप का आकार ले लेती है।

डीएपी उर्वरक क्या है : डीएपी खाद कृषि में उपयोग होने वाली क्षारीय प्रकृति का रासायनिक उर्वरक में से एक है जिसका पूरा नाम डाई अमोनियम फास्फेट है। यह विश्व में उपयोग होने वाली सबसे लोकप्रिय और महत्वपूर्ण फॉस्फोरस खाद मे से एक है। इसका उपयोग सबसे ज्यादा हरित क्रान्ति के बाद देखने को मिला है जिसके कारण ज्यादातर किसान इसका उपयोग करने लगे है। डीएपी पौधों में पोषण के लिए नत्रजन एवं फॉस्फोरस की कमी पूरी करने के लिए सबसे अच्छा स्त्रोत माना जाता है। इसमें 18 प्रतिशत नत्रजन, 46 प्रतिशत फॉस्फोरस पाया जाता है और यह 50 किग्रा. के बेग में बाजार में उपलब्ध होता है।

डीएपी खाद का उपयोग : पौधों को अपने पूरे जीवनकाल में लगभग 17 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है जिसमें नत्रजन फॉस्फोरस महत्वपूर्ण एवं प्रारंभिक पोषक तत्व माने जाते है। इन पोषक तत्वों के लिए डीएपी सबसे सर्वोच्च अकार्बनिक स्त्रोत में से एक है जो मिट्टी के सम्पर्क में आने से नमी की उपलब्धता में आसानी से घुल जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें पाया जाने वाला सबसे अधिक तत्व फॉस्फोरस मिट्टी के सम्पर्क में आकर अच्छे से घुल जाता है और पौधों में जड़ो के विकास में योगदान प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त यह पौधों के कोशिकाओं के विभाजन में भी योगदान करता है।

डीएपी की कीमत : पिछले कुछ वर्षो से डीएपी खाद की कीमत में काफी ज्यादा बढ़ोतरी हुई है जिससे कृषि में इसकी उपलब्धता दिन ब दिन घट रही है। पाँच से 10 वर्ष पहले डीएपी की कीमत 300 से 600 रूपऐ हुआ करती थी जो अब दो से तीन गुना कीमत पर किसानों को खरीदना पड़ रहा है। अभी मई 2021 में डीएपी खाद की कीमत 1900 रूपए तक पहुच गयी थी जो फिर से 1200 पर आ गई है।

एसएसपी उर्वरक क्या है : यह सख्त दानेदार, भुरा काला बादामी रगों से युक्त तथा नाखूनों से आसानी से न टुटने वाला उर्वरक है। यह चुर्ण के रूप में भी उपलब्ध होता है। इसका पूरा नाम सिंगल सूपर फॉस्फेट है। इसमें

फॉस्फोरस की मात्रा 16%, सल्फर की मात्रा 12% और कैल्सियम की मात्रा 19% पाई जाती है। इस दानेदार उर्वरक की मिलावट बहुधा डीएपी व एन.पी. के मिश्रित उर्वरकों के साथ की जाने की संभावना बनी रहती है।

एसएसपी का प्रयोग कब करें: एसएसपी ओर खादों की तुलना में कम धुलनशील होता है, इसका प्रयोग हमेशा जुताई के समय करना चाहिए, क्योंकि यह कम धुलनशील रहने के कारण मिट्टी में धुलने में ज्यादा समय लेता है। अगर किसान ने एसएसपी को जुताई के समय उपयोग नही किया है तो फिर फूल से फल बनने के समय करें, क्योंकि फूल से फल बनने में लगभग 15 से 20 दिन का समय लगता है और इतने दिनों में सिंगल सुपर फॉस्फेट मिट्टी में धुल जाता है।

सरसों में डी.ए.पी. के स्थान पर सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग लाभदायक है

तिलहनी फसलों में सरसों रबी की महत्वपूर्ण फसल है। अधिक उत्पादन हेतु सरसों के लिए बारानी क्षेत्रों में 80: 40: 30 किग्रा प्रति हैक्टेयर नत्रजन : फॉस्फोरस : पोटाश के प्रयोग की सिफारिश है। सिंगल सुपर फॉस्फेट में 16 किग्रा फॉस्फोरस 12 किग्रा सल्फर व 19 किग्रा कैल्सियम पाया जाता है, जबकी डी.ए.पी. में 46 किग्रा फॉस्फोरस व 18 किग्रा नत्रजन पाया जाता है। फॉस्फोरस सरसों में जड़ो को वृद्धि, उर्जा प्रदान करने का कार्य करता है। सल्फर तिलहनी फसलों में तेल की वृद्धि, प्रोटीन सं लेषण का कार्य करता है। नत्रजन फसलों की वानस्पतिक वृद्धि, प्रोटीन निर्माण का कार्य करता है तथा कैल्शियम पौधों में कोशिका भित्ति निर्माण, फलियों की संख्या व दाने भरने का कार्य करता है। किसान सरसों की फसल में सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग करके लगभग रू.1910 प्रति हैक्टेयर की बचत कर सकते है।

अतः किसान भाई सरसों की फसल में सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग यूरिया के साथ करें तो डी.ए.पी. से बेहतर होगा क्योंकि एस.एस.पी. के साथ नाईट्रोजन की उपलब्धता यूरिया से हो जाती है और साथ ही एस.एस.पी. में पहले से सल्फर, कैल्सियम मौजूद है जो कि डी.ए.पी. में नही है। इसलिए जब भी एस.एस.पी का प्रयोग करें तो डी.ए.पी. की तुलना में 3 गुना ज्यादा करें। अगर ऐसा करते है तो एस.एस.पी खाद डी.ए.पी. से बेहतर होगा। किसान भाई सरसों की फसल में सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग करके लगभग रू. 3000 से 4000 प्रति हैक्टेयर का अतिरिक्त लाभ प्राप्त कर सकते है।

तालिका1 : डी.ए.पी. के स्थान पर सिंगल सुपर फॉस्फेट के प्रयोग का तुलनात्मक अध्ययन

क्र.सं.	विवरण	डी.ए.पी.	सिंगल सुपर फॉस्फेट
1.	सरसों में 40 किग्रा प्रति हैक्टेयर फॉस्फोरस के लिए	डी.ए.पी. 90 किग्रा प्रति हैक्टेयर चाहिए। लागत–90x25 (रू प्रति किग्रा) =रू 2250/-	एसएसपी 250 किग्रा प्रति हैक्टेयर चाहिए। लागत–250x6 (रू प्रति किग्रा) =रू 1500/- बचत =2250-1500 = रू 750/-
2.	सल्फर–सरसों के लिए 30 किग्रा प्रति हैक्टेयर की आवश्यकता होती है	एलिमेन्टल सल्फर–35 किग्रा प्रति हैक्टेयर चाहिए। लागत-35x40 (रू प्रति किग्रा) =रू 1400/-	250 किग्रा एसएसपी से 30 किग्रा सल्फर की पूर्ति होती है। इसलिए रू= 1400 की बचत।
3.	नत्रजन 80 किग्रा प्रति हैक्टेयर के लिए	डी.ए.पी. में 18 किग्रा नत्रजन पाई जाती है तथा 130 किग्रा यूरिया का और प्रयोग करने पर लागत–130x6 (रू प्रति किग्रा) =रू 780/-	80 किग्रा नत्रजन के लिए यूरिया का प्रयोग करने पर लागत–170x6 (रू किग्रा) =रू 1020/- खर्च।
4.	उर्वरको हेतु कुल लागत	2250+1400+780 = रू 4430/-	1500+1020 = रू 2520/-
5.	डी.ए.पी. के स्थान पर एसएसपी के उपयोग से कुल बचत	4430-2520 = रू 1910/-	
अन्य लाभ :			
1.	कैल्शियम	डी.ए.पी. में कैल्शियम नही पाया जाता है।	250 किग्रा एसएसपी में 47.5 किग्रा कैल्शियम पाया जाता है, जो फलियों व दानों की संख्या में वृद्धि करता है।
2.	मृदा संरचना में सुधार	मृदा संरचना में कोई सुधार नही होता है।	एसएसपी में कैल्शियम होने के करण मृदा संरचना में सुधार होता है।
3.	तेल की मात्रा में वृद्धि	डी.ए.पी.से सल्फर की पूर्ति नही होने के कारण सरसों मे तेल की मात्रा वृद्धि नही होती है।	सरसों में एसएसपी के उपयोग में लगभग 1 से 1.5 प्रतिशत तेल की मात्रा में वृद्धि होती है। उदाहरण के तौर पर 20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सरसों उत्पादन होने पर 1 प्रतिशत तेल की वृद्धि होने से लगभग रू.100 प्रति क्विंटल की अधिक भाव पर बेचने से लगभग 200 रू. का अतिरिक्त लाभ होता है।
4.	अंकुरण क्षमता पर प्रभाव	डी.ए.पी. में अमोनिया गैस के स्त्राव होने के कारण सरसों के बीज अकुरण पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है।	सरसों के बीज अकुरण पर कोई प्रभाव नही पड़ता है।
5.	डी.ए.पी. के स्थान पर एसएसपी के उपयोग से कुल बचत	⇒ 1910 + 2000 = रू 3910/- (3800 से 4000) का अतिरिक्त लाभ	